।। वीतराग शासन जयवंत हो ।।

दशलक्षण सार
आलोचना/प्रतिक्रमण

:: कृतिकार::

परम पूज्य साहित्य रत्नाकर, क्षमामूर्ति

आचार्य श्री 108 विशदसागरजी मुनिराज

कृति : दशलक्षण सार एवं दश धर्मों में लगे दोषों की आलोचना/ प्रतिक्रमण
कृतिकार : प.पू. साहित्य रत्नाकार, क्षमामूर्ति
आचार्य श्री 108 विशदसागरजी महाराज
संस्करण : प्रथम 2025
संकलन : स्थविर मुनिश्री 108 विशालसागरजी महाराज
सहयोग : मुनिश्री विश्वाक्षरसागरजी, मुनिश्री विभोरसागरजी
मुनिश्री विलक्ष्यसागरजी, मुनिश्री विपिनसागरजी
सहयोगी : आर्यिका श्री भक्तिभारती माताजी
क्षुल्लिका श्री वात्सल्यभारती माताजी
ब्र. प्रदीप भैया - मो. 75688 40873
संपादन : ब्र. ज्योति दीदी - मो. 98290 76085
ब्र. आस्था दीदी - मो. 96609 96425
ब्र. सपना दीदी - मो. 98291 27533
ब्र. आरती दीदी - मो. 87008 76822
प्राप्ति स्थल : 1. सुरेश जैन सेठी, जयपुर - मो. : 94133 36017
2. श्री महेन्द्र जैन, दिल्ली - मो. : 98105 70747
3. हरीश जैन, दिल्ली - मो. : 91362 48971
4. विशद साहित्य केन्द्र, रेवाड़ी - मो. : 94168 88879
5. नीरज जैन, लखनऊ - मो. : 94512 51308
6. जैन मंदिर, गुलाब वाटिका
दिल्ली - मो. : 98185 70432
मुद्रण : डीसेन्ट ग्राफिक्स, इन्दौर - मो. : 98260 14047

: पुण्यार्जक :
श्रीमती शोभा – श्री प्रकाशचंद जैन
123, सुदामा नगर, अन्नपूर्णा सेक्टर, इंदौर
मो.: 93029-16652

विशाल हृदय के उद्गार

एक वर्ष में 3 बार माघ चैत्र भादौं में सोलहकारण एवं दशलक्षण पर्व आते हैं। जैन समाज में भादौं के महिने में दशलक्षण का विशेष प्रभाव देखा जाता है। उनके भक्तगण दश दिन उपवास रखते हैं। कोई पानी मात्र लेकर अथवा अल्प आहार लेकर कोई एकाशन करके दश दिन निकालते हैं। मंदिरों में पूजा पाठ करने वालों की भीड़ हो जाती है। अपने अपने हिसाब से अलग-अलग बैठकर अथवा सामूहिक बैठकर जिनवाणी में से विनय पाठ पूजाएँ आदि करते रहते हैं। इन दिनों अलग-अलग दिन में अलग-अलग पूजाओं की संख्या पर्वों के हिसाब से बढ़ जाती है। ऑफिस, दुकान, स्कूल जाने वालों को समय की अनुकूलता नहीं होने से पूजा पाठ से वंचित भी रहना पड़ता है।

वर्तमान के सर्वाधिक 250 प्रकार के विधानों के रचयिता साहित्य रत्नाकर आचार्य श्री विशदसागरजी ने वर्तमान स्थिति में समय की परिस्थिति को देखते हुए लघु विनय पाठ व पूजाओं की रचना की है। दशधर्म का लघुसार एवं दशधर्मों में लगे दोषो की आलोचना/ प्रतिक्रमण आदि का भी समावेश किया।

प्रस्तुत पुस्तक में अलग प्रकार से अर्घ्यों की संरचना की गई है। क्षमावाणी पर्व पर हम अपने परिवार, रिश्तेदार, समाज वालों से क्षमा माँगते हैं, परन्तु हमें सर्वप्रथम देव-शास्त्र गुरु से क्षमा माँगना चाहिए। एकेन्द्रिय आदि जीवों से भी क्षमा मांगनी चाहिए। भक्तगण पर्वराज पर्युषण में दस दिन धर्माराधना रूप में प्रस्तुत पुस्तक से पूजा करके अपने आपको धर्ममय बनाने में समर्थ होंगे। पापों का प्रक्षालन कर सातिशय पुण्यार्जन भी कर सकेंगे। पुनः गुरुवर के श्री चरणों में त्रि भक्ति पूर्वक नमोस्तु करते हुए यही भावना भाते हैं हम भी दसलक्षण धर्म की आराधना करके पूर्णता को प्राप्त करें।

दिनांक : 22.08.2025

स्थविर : मुनि विशालसागर (संघस्थ)
वर्षायोग - सुदामा नगर, इंदौर

लघु विनय पाठ-1

(दोहा)

पूजा विधि से पूर्व यह, पढ़ें विनय से पाठ ।
धन्य जिनेश्वर देवजी, कर्म नशाए आठ ॥1॥
शिव वनिता के ईश तुम, पाए केवल ज्ञान ।
अनन्त चतुष्टय धारते, देते शिव सोपान ।॥2॥
पीड़ा हारी लोक में, भव-दधि नाशनहार ।
ज्ञायक हो त्रयलोक के, शिवपद के दातार ॥3॥
धर्मामृत दायक प्रभो!, तुम हो एक जिनेन्द्र ।
चरण कमल में आपके, झुकते विनतं शतेन्द्र ॥4॥
भविजन को भवसिन्धु में, एक आप आधार ।
कर्म बन्ध का जीव के, करने वाले क्षार ॥5॥
चरण कमल तव पूजते, विघ्न रोग हों नाश ।
भवि जीवों को मोक्ष पथ, करते आप प्रकाश ॥6॥
यह जग स्वारथ से भरा, सदा बढ़ाए राग ।
दर्श ज्ञान दे आपका, जग को विशद विरांग ।॥॥7॥
एक शरण तुम लोक में, करते भव से पार ।
अतः भक्त बन के प्रभो! आया तुमरे द्वार ॥8॥

मंगल पाठ

मंगल अर्हत् सिद्ध जिन, आचार्योपाध्याय संत ।
धर्मागम की अर्चना, से हो भव का अंत ॥1॥
मंगल जिनगृह बिम्ब जिन, भक्ती के आधार।
जिनकी अर्चा कर मिले, मोक्ष महल का द्वार ॥10॥

॥ इत्याशीर्वादःपुष्पांजलिं ॥

अथ पूजा पीठिका

ॐ जय जय जय नमोस्तु, नमोस्तु, नमोस्तु । णमोअरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आयरियाणं, णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं । ॐ ह्रीं अनादिमूल मंत्रेभ्योनमः। (पुष्पांजलिं क्षिपामि) चत्तारि मंगलं, अरिहन्ता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो, धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा, अरिहन्ता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो, धम्मो लोगुत्तमो। चत्तारि शरणं पव्वज्जामि, अरिहंते शरणं पव्वज्जामि, सिद्धे शरणं पव्वज्जामि, साहू शरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तं, धम्मं शरणं पव्वज्जामि।

ॐ नमोऽर्हते स्वाहा। (पुष्पांजलिं क्षिपामि)

मंगल विधान

शुद्धाशुद्ध अवस्था में कोई, णमोकार को ध्याये ।
पूर्ण अमंगल नशे जीव का, मंगलमय हो जाए ।।
सब पापों का नाशी है जो, मंगल प्रथम कहाए ।
विघ्न प्रलय विषनिर्विष शाकिनि, बाधा ना रह पाए ।।

।। पुष्पांजलिं क्षिपेत्।।

अर्घ्यावली

जल गंधाक्षत पुष्प चरु, दीप धूप फल साथ।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य ले, पूज रहे जिन नाथ।।

ॐ ह्रीं श्री भगवतो गर्भ जन्म-तप-ज्ञान निर्वाण पंच कल्याणकेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।।।।

ॐ ह्रीं श्री अर्हत् सिद्धाचार्योपाध्याय सर्व साधुभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।।2।।

ॐ ह्रीं श्री भगवज्जिन अष्टाधिक सहस्त्रनामेभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।।3।।

ॐ ह्रीं श्री द्वादशांगवाणी प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग, द्रव्यानुयोग नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।4।।

ॐ ह्रीं ढाईद्वीप स्थित त्रिऊन नव कोटि मुनि चरणकमलेभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।।5।।

पूजा प्रतिज्ञा पाठ

अनेकांत स्याद्वाद के धारी, अनंत चतुष्टय विद्यावान ।
मूल संघ में श्रद्धालू जन, का करने वाले कल्याण ।।
तीनलोक के ज्ञाता दृष्टा, जग मंगल कारी भगवान ।
भाव शुद्धि पाने हे स्वामी ! करता हूँ प्रभु का गुणगान ।।1।।
निज स्वभाव विभाव प्रकाशक, श्री जिनेन्द्र हैं क्षेम निधान ।
तीन लोकवर्ती द्रव्यों के विस्तृत ज्ञानी हे भगवान ।।
हे अर्हंत ! अष्ट द्रव्यों का, पाया मैंने आलंबन ।
होकर के एकाग्र चित्त मैं , पुण्यादिक का करूँ हवन ।।2।।

ॐ ह्रीं विधियज्ञ-प्रतिज्ञानाय जिनप्रतिमाग्रे पुष्पांजलि क्षिपेत् ।

स्वास्ति मंगल पाठ

वृषभ अजित संभव अभिनन्दन, सुमति पद्म सुपार्श्व जिनेश ।
चन्द्र पुष्प शीतल श्रेयांस जिन, वासुपूज्य पूजूँ तीर्थेश ।।
विमलानन्त धर्म शांती जिन, कुन्थु अरह मल्ली दें श्रेय ।
मुनिसुव्रत नमि नेमि पार्श्व प्रभु, वीर के पद में स्वस्ति करेय ।।

(पुष्पांजलि क्षिपेत्)

ऋषिवर ज्ञान ध्यान तप करके, हो जाते हैं ऋद्धीवान ।
मूलभेद हैं आठ ऋद्धि के, चौंसठ उत्तर भेद महान् ।।
बुद्धि ऋद्धि के भेद अठारह, जिनको पाके ऋद्धीवान ।
निष्पृह होकर करें साधना, 'विशद' करें स्व-पर कल्याण ।।1।।
ऋद्धि विक्रिया ग्यारह भेदों, वाले साधू ऋद्धीवान ।
नौ भेदों युत चारण ऋद्धी, धारी साूध रहे महान् ।।
तप ऋद्धी के भेद सात हैं, तप करते साधू गुणवान ।
मनबल वचन कायबल ऋद्धी, धारी साधू रहे प्रधान ।।2।।
भेद आठ औषधि ऋद्धी के, जिनके धारी सर्व ऋशीष ।
रस ऋद्धी के भेद कहे छह, रसास्वाद शुभ पाए मुनीश ।।
ऋद्धि अक्षीण महानस एवं, ऋद्धि महालय धर ऋषिराज ।
जिनकी अर्चा कर हो जाते, सफल सभी के सारे काज ।।3।।

(इति परम-ऋषिस्वस्ति मंगल विधानम्) (इति पुष्पांजलि क्षिपेत्)

मूलनायक सहित समुच्चय पूजा

स्थापन (दोहा)

देव शास्त्र गुरु देव नव, विद्यमान जिन सिद्ध ।
कृत्रिमा-कृत्रिम बिम्ब जिन, भू निर्वाण प्रसिद्ध ॥
सहस्त्रनाम दशधर्म शुभ, रत्नत्रय णमोकार ।
सोलह कारण का हृदय, आह्वानन् शत बार॥

ॐ ह्रीं अर्ह मूलनायक श्री..... सहित सर्व देव शास्त्र गुरु, नवदेवता, तीस चौबीसी, विद्यमान विंशति जिन, पंचमेरु, नन्दीश्वर, त्रिलोक सम्बन्धी, कृत्रिम अकृत्रिम चैत्य चैत्यालय, सहस्त्रनाम, सोलह कारण, दशलक्षण, रत्नत्रय, णमोकार, निर्वाण क्षेत्र गणधरादि मुनि समूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितौ भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

(सखी छन्द)

यह निर्मल नीर चढ़ाएँ, जन्मादिक रुज विनशाएँ ।
देवादि सर्व जिन ध्यायें, जिन प्रतिमा पूज रचाएँ ॥1॥

ॐ ह्रीं अर्ह मूलनायक श्री... सहित सर्व पूज्येसु श्री जिनेन्द्राय नमः जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

सुरभित यह गंध चढ़ाएँ, भव सागर से तिर जाएँ ।
देवादि सर्व जिन ध्यायें, जिन प्रतिमा पूज रचाएँ ॥2॥

ॐ ह्रीं अर्ह मूलनायक श्री... सहित सर्व पूज्येसु श्री जिनेन्द्राय नमः भवाताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीतिस्वाहा ।

अक्षत के पुंज चढ़ाएँ, शाश्वत अक्षय पद पाएँ ।
देवादि सर्व जिन ध्यायें, जिन प्रतिमा पूज रचाएँ ॥3॥

ॐ ह्रीं अर्ह मूलनायक श्री... सहित सर्व पूज्येसु श्री जिनेन्द्राय नमः अक्षय पद प्राप्ताय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

पुष्पित हम पुष्प चढ़ाएँ, कामादिक दोष नशाएँ ।
देवादि सर्व जिन ध्यायें, जिन प्रतिमा पूज रचाएँ ॥4॥

ॐ ह्रीं अर्ह मूलनायक श्री... सहित सर्व पूज्येसु श्री जिनेन्द्राय नमः कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

चरु यह रसदार चढ़ाएँ, हम क्षुधा रोग विनशाएँ ।

देवादि सर्व जिन ध्यायें, जिन प्रतिमा पूज रचाएँ ॥5॥

ॐ ह्रीं अर्ह मूलनायक श्री... सहित सर्व पूज्येसु श्री जिनेन्द्राय नमः क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

रत्नोंमय दीप जलाएँ, हम मोह तिमिर विनशाएँ ।

देवादि सर्व जिन ध्यायें, जिन प्रतिमा पूज रचाएँ ॥6॥

ॐ ह्रीं अर्हँ मूलनायक श्री... सहित सर्व पूज्येसु श्री जिनेन्द्राय नमः महामोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

सुरभित यह धूप जलाएँ, कर्मों से मुक्ती पाएँ ।

देवादि सर्व जिन ध्यायें, जिन प्रतिमा पूज रचाएँ ॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हँ मूलनायक श्री... सहित सर्व पूज्येसु श्री जिनेन्द्राय नमः अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामीतिस्वाहा ।

फल ताजे शिव फलदायी, हम चढ़ा रहे हैं भाई ।

देवादि सर्व जिन ध्यायें, जिन प्रतिमा पूज रचाएँ ॥8॥

ॐ ह्रीं अर्ह मूलनायक श्री... सहित सर्व पूज्येसु श्री जिनेन्द्राय नमः मोक्षफल प्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

यह पावन अर्घ्य चढ़ाएँ, अनुपम अनर्घ्य पद पाएँ ।

देवादि सर्व जिन ध्यायें, जिन प्रतिमा पूज रचाएँ ॥9॥

ॐ ह्रीं अर्ह मूलनायक श्री... सहित सर्व पूज्येसु श्री जिनेन्द्राय नमः अनर्घ्य पद प्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा- शांती पाने के लिए, देते शांती धार ।

हमको भी निज सम करो, कर दो यह उपकार ॥

(शांतये शांतिधारा)

दोहा - पुष्पांजलि करते यहाँ, लेकर पावन फूल ।

विशद भावना है यही, कर्म होंय निर्मूल ॥

(पुष्पांजलि क्षिपेत्)

जयमाला

दोहा - जैन धर्म जयवंत है, तीनों लोक त्रिकाल ।
गाते जैनाराध्य की, भाव सहित जयमाल ।।

(ज्ञानोदय छन्द)

अर्हत् सिद्धाचार्य उपाध्याय, सर्व साधु के चरण नमन ।
जैन धर्म जिन चैत्य जिनालय, जैनागम का है अर्चन ॥1॥
भरतैरावत ढाई द्वीप में, तीन काल के जिन तीर्थेश ।
पंच विदेहों के तीर्थंकर, पूज रहे हम यहाँ विशेष ॥2॥
स्वर्ग लोक में और ज्योतिषी, देवों के जो रहे विमान ।
भावन व्यन्तर के गेहों में, रहे जिनालय महति महान ।।3।।
मध्य लोक में मेरु कुलाचल, गिरि विजयार्ध हैं इष्वाकार ।
रजताचल मानुषोत्तर गिरि तरु, नन्दीश्वर हैं मंगलकार ।।4।।
रुचक कुण्डल गिरि पे जिनगृह, सिद्ध क्षेत्र जो हैं निर्वाण ।
सहस्त्रकूट शुभ समवशरण जिन, मानस्तंभ हैं पूज्य महान ।5।।
उत्तम क्षमा मार्दव आदिक, बतलाए दश धर्म विशेष ।
रत्नत्रय युत धर्म ऋद्धियाँ, सहसनाम पावें तीर्थेश ।।6।।

दोहा- सोलह कारण भावना, और अठाई पर्व ।
पंच कल्याणक आदि हम, पूज रहें हैं सर्व ॥

ॐ ह्रीं अर्ह मूलनायक 1008 श्री......सहित वर्तमान भूत भविष्यत सम्बन्धी पंच भरत, पंच ऐरावत, पंच विदेह क्षेत्रावस्थित सर्व तीर्थंकर, नवदेवता, मध्य ऊर्ध्व एवं अधोलोक, नन्दीश्वर, पंचमेरु सम्बन्धित कृत्रिमाकृत्रिम चैत्य चैत्यालय, गर्भ जन्म तप केवलज्ञान निर्वाण भूमि, तीर्थ क्षेत्र, अतिशय क्षेत्र, दशलक्षण, सोलहकारण, रत्नत्रयादि धर्म, ढाई द्वीप स्थित तीन कम नौ करोड़ गणधरादि मुनिश्वरेभ्यो सम्पूर्णार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

दोहा- जिनाराध्य को पूजकर, पाना शिव सोपान ।
यही भावना है विशद, पाएँ पद निर्वाण ॥

(इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

"दशलक्षण पूजा"

स्थापना

उत्तम क्षमा मार्दव आर्जव, शौच सत्य संयम तप जान ।
त्याग आकिन्चन ब्रह्मचर्य शुभ, शिव पद के पावन सोपान ॥
सर्व सुखों को देने वाला, पावन हितकारी है धर्म ।
करते हैं हम आह्वानन शुभ, पाने विशद धर्म का मर्म ॥

दोहा : आह्वानन् करते हृदय, होके भाव विभोर ।
भाते हैं यह भावना, बढ़ें मोक्ष की और ॥

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमा मार्दव आर्जव, शौच सत्य संयम तप त्याग आकिञ्चन ब्रह्मचर्य दशलक्षण धर्म अत्र अवतर-अवतर संवौषट् इति आह्वाननं। अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितौ भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

(ज्ञानोदय छन्द)

क्षमामयी उत्तम जल लेकर, धारा तीन कराए हैं ।
जन्म जरादि रोग नाशकर, जिन गुण पाने आए हैं ॥
दस धर्मों की पूजा करके, अपने कर्म नशाएँगे ।
संयम धारण करके क्रम से, सिद्ध अवस्था पाएँगे ॥ 1 ॥

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि दशलक्षण धर्मांगाय नमः जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मार्दव भाव का चंदन लेकर, यहाँ चढ़ाने आए हैं ।
भवाताप का नाश करें हम, पूजा करने आए हैं ॥
दस धर्मों की पूजा करके, अपने कर्म नशाएँगे ।
संयम धारण करके क्रम से, सिद्ध अवस्था पाएँगे ॥ 2 ॥

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि दशलक्षण धर्मांगाय नमः संसार ताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

आर्जव भाव के अक्षय अक्षत, थाल में भरके लाए हैं ।
पावन अक्षय पद पाने हम, आज यहाँ पर आए हैं ॥
दस धर्मों की पूजा करके, अपने कर्म नशाएँगे ।
संयम धारण करके क्रम से, सिद्ध अवस्था पाएँगे ॥ 3 ॥

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि दशलक्षण धर्मांगाय नमः अक्षय पद प्राप्ये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

शौच भाव के पुष्प बनाकर, चरण चढ़ाने लाए हैं ।
काम रोग के नाश हेतु हम, जिन चरणों में आए हैं ॥
दस धर्मों की पूजा करके, अपने कर्म नशाएँगे ।
संयम धारण करके क्रम से, सिद्ध अवस्था पाएँगे ॥ 4 ॥

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि दशलक्षण धर्मांगाय नमः कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

सत्य धर्म के चरू बनाकर, थाल में यह भर लाए हैं ।
क्षुधा रोग हो जाय नाश मम, अर्चा करने आए हैं ॥
दस धर्मों की पूजा करके, अपने कर्म नशाएँगे ।
संयम धारण करके क्रम से, सिद्ध अवस्था पाएँगे ॥ 5 ॥

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि दशलक्षण धर्मांगाय नमः क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संयम धर्म का दीप जलाकर, जिन चरणों में लाए हैं ।
मोह अन्ध हो नाश हमारा, शिव पद पाने आए हैं ॥
दस धर्मों की पूजा करके, अपने कर्म नशाएँगे ।
संयम धारण करके क्रम से, सिद्ध अवस्था पाएँगे ॥ 6 ॥

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि दशलक्षण धर्मांगाय नमः मोहांधकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम तप की धूप बनाकर, अग्नि में खेने लाए हैं ।
अष्ट कर्म हों नाश हमारे, जिन गुण पाने आए हैं ॥
दस धर्मों की पूजा करके, अपने कर्म नशाएँगे ।
संयम धारण करके क्रम से, सिद्ध अवस्था पाएँगे ॥ 7 ॥

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि दशलक्षण धर्मांगाय नमः अष्ट कर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

त्याग धर्म के फल है अनुपम, यहाँ चढ़ाने आए हैं ।
पद अनर्घ्य पाने को हम प्रभु, चरण चढ़ाने लाए हैं ॥
दस धर्मों की पूजा करके, अपने कर्म नशाएँगे ।
संयम धारण करके क्रम से, सिद्ध अवस्था पाएँगे ॥ 8 ॥

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि दशलक्षण धर्मांगाय नमः महामोक्ष फल प्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

आकिञ्चन्य धर्म का अनुपम, अर्घ्य बनाकर लाए हैं ।
पद अनर्घ्य पाने को हम प्रभु, चरण चढ़ाने आए हैं ॥
दस धर्मों की पूजा करके, अपने कर्म नशाएँगे ।
संयम धारण करके क्रम से, सिद्ध अवस्था पाएँगे ॥ 9 ॥

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमादि दशलक्षण धर्मांगाय नमः अनर्घ्य पद प्राप्त्ये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा : ब्रह्मचर्य शुभ धर्म है, शिव पद का सोपान।
शांती धारा दे रहे, पाने पद निर्वाण ॥

॥ शान्तये शांतिधारा ॥

दोहा : क्षमावणी के पुष्प शुभ, पुष्पाञ्जलि ले हाथ।
अर्पित करने भाव से, विनय भाव के साथ ॥

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ॥

''अर्घ्यावली''

दोहा : अर्चा को दश धर्म की, आए प्रभु के द्वार।
पुष्पाञ्जलि करते विशद, नत हो बारम्बार ॥

(अथ पुष्पाञ्जलि क्षिपेत)

दश धर्मों के अर्घ्य

(अर्घ्यावली)

दोहा - क्रोध समा ना जानिए, शत्रु लोक में कोय।
धर्म क्षमा सम है नहीं, त्रिभुवन में भी सोय ॥ 1 ॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमल समुद्गताय उत्तम क्षमा धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मान कहा है लोक में, सिर का बोझ समान ।
विनय भाव मार्दव रहा, शिव पद का सोपान ॥ 2 ॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमल समुद्गताय उत्तम मार्दव धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

माया ठगनी ने ठगे, जग के सारे जीव ।
धारे आर्जव धर्म को, पाए पुण्य अतीव ॥ 3 ॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमल समुद्गताय उत्तम आर्जव धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोभ पाप का बाप है, धर्म कर्म विसराय ।
जीवन सुखमय शांत हो, शौच धर्म को पाय ॥ 4 ॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमल समुद्गताय उत्तम शौच धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सत्य धर्म औषधि परम, कटुक वचन विषवान ।
सत्य वचन हित मित प्रिय, करते सौख्य प्रदान ॥ 5 ॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमल समुद्गताय उत्तम सत्य धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रहा असंयम पाप मय, संयम पुण्य प्रदाय ।
सकल संयमी जीव हो, मोक्ष महापद पाय ॥ 6 ॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमल समुद्गताय उत्तम संयम धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तप से तपकर देह से, कर्मों का क्षय होय ।
कंचन कुन्दन आत्मा, सम्यक् तप से सोय ॥ 7 ॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमल समुद्गताय उत्तम तप धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्व पर स्वभाव को जानकर, तन से छोड़े राग ।
चेतन के गुण में रमे, कहा विशद ये त्याग ॥ 8 ॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमल समुद्गताय उत्तम त्याग धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चेतन में किंचित् नहीं, पर वस्तु का साथ ।
निज स्वभाव को प्राप्त कर, बने स्वयं का नाथ ॥ 9 ॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमल समुद्गताय उत्तम आंकिन्चन्य धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निज स्वरूप में हो रमण, ब्रह्मचर्य कहलाय ।
परं ब्रह्म को प्राप्त कर, परं ब्रह्म हो जाय ॥ 10 ॥

ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमल समुद्गताय उत्तम ब्रह्मचर्य धर्मांगाय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा : शिव पथ के सोपान हैं, दश लक्षण शुभ धर्म।
जयमाला गाते विशद, पाने निज सुख शर्म ॥

''चौपाई''

क्रोध कषाय रही दुखदायी, जिसने जग की बुद्धि नसाई।
उत्तम क्षमा धर्म सुखकारी, तीन लोक में मंगलकारी ॥ 1 ॥

मान कषाय का धारी मानी, स्वयं को श्रेष्ठ कहे अज्ञानी ।
मार्दव धर्म जगत कल्याणी, धारण करते हैं सद्ज्ञानी ।। 2 ।।
करे जीव जो मायाचारी, जो है स्व पर को दुखकारी ।
होते आर्जव धर्म के धारी, पावन अतिशय महिमाकारी ।। 3 ।।
जिसके मन में लोभ समाए, परिग्रही वह जीव कहाए ।
उत्तम शौच धर्म का धारी, संतोषी होवे अविकारी ।। 4 ।।
जीव कटुक बोले जो वाणी, कहा असत्यवादी अज्ञानी ।
वचन कहे हितमित प्रिय ज्ञानी, जग जन के हों जो कल्याणी ।। 5 ।।
इन्द्रिय मन का हो जयकारी, जग जीवों का रक्षाकारी ।
होवे उत्तम संयम धारी, मोक्ष मार्ग धारी अनगारी ।। 6 ।।
अनशनादि तप बाह्य कहाए, प्रायश्चित्तादि अभ्यंतर गाए ।
संवर और निर्जरा कारी, तप होते हैं कर्म निवारी ।। 7 ।।
क्षेत्रादिक परिग्रह दश गाए, अभ्यंतर चौदह कहलाए ।
सर्व परिग्रह के जो त्यागी, त्याग धर्म धर हों बड़भागी ।। 8 ।।
किञ्चित राग हृदय जो आए, वह भी रागी जीव कहाए ।
होवे आकिञ्चन व्रत धारी, सर्व लोक में मंगलकारी ।। 9 ।।
जो है काम रोग के रोगी, एवं पंचेन्द्रिय के भोगी ।
भोग रोग के होवें त्यागी, ब्रह्मचर्य व्रत धर बड़भागी ।। 10 ।।
दश धर्मों को जो अपनाएँ, मोक्ष मार्ग पर कदम बढ़ाएँ ।
कर्म निर्जरा प्राणी पाएँ, सिद्ध शिला पर धाम बनाएँ ।। 11 ।।

दोहा : महिमा शुभ दश धर्म की, बतलाई जिनराज ।
पूजा करने जिनशरण, आई सकल समाज ।।

ॐ ह्रीं अर्हन्मुखकमल समुद्गताय उत्तम क्षमादि दशलक्षण धर्मांगाय नमः
जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा : धारण करने धर्म दश, पाने शिव सोपान ।
भाते हैं यह भावना, पाएँ पद निर्वाण ।।

।। इत्याशीर्वादः ।।

समुच्चय महार्घ्य

अर्हत् सिद्धाचार्य उपाध्याय, सर्व साधु के चरण नमन ।

जैनागम जिन चैत्य जिनालय, जैन धर्म को शत् वन्दन ॥

सोलह कारण धर्म क्षमादिक, रत्नत्रय चौबिस तीर्थेश ।

अतिशय सिद्धक्षेत्र नन्दीश्वर, की अर्चा हम करें विशेष ॥

दोहा-अष्ट द्रव्य का अर्घ्य यह, 'विशद' भाव के साथ ।

चढ़ा रहे त्रययोग से, झुका चरण में माथ॥

ॐ ह्रीं श्री अरिहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, सर्वसाधु, सरस्वती देव्यै, सोलहकारण भावना, दशलक्षण धर्म, रत्नत्रय धर्म, त्रिलोक स्थित कृत्रिम-अकृत्रिम चैत्य चैत्यालय, नन्दीश्वर, पंचमेरु सम्बन्धी चैत्य-चैत्यालय, कैलाश गिरि, सम्मेद शिखर, गिरनार, चम्पापुर, पावापुर आदि निर्वाण क्षेत्र, अतिशय क्षेत्र, तीस चौबीसी, तीन कम नौ करोड़ गणधरादि मुनिश्वरेभ्यो समुच्चय महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(पुष्पक्षेपण करते हुए शांति पाठ बोलें)

शांतिपाठ

शांतिनाथ शांति के दाता, भवि जीवों के भाग्य विधाता ।
परम शांत मुद्रा जो धारे, जग जीवों के तारण हारे ॥
शरण आपकी जो भी आते, वे अपने सौभाग्य जगाते ।
शांतिपाठ पूजा कर गाएँ, पुष्पांजलि करशांतिजगाएँ ॥
जिन पद शांती धार कराएँ, जीवन में सुख शांति पाएँ ।
जीवों को सुख शांति प्रदायी, धर्म सुधामृत के वरदायी ॥
शांतिनाथ दुख दारिद्र नाशी, सम्यक्दर्शन ज्ञान प्रकाशी ।
राजा प्रजा भक्त नर-नारी, भक्ति करें सब मंगलकारी ॥
जैन धर्म जिन आगम ध्यायें, परमेष्ठी पद शीश झुकाएँ ।
श्री जिन चैत्य जिनालय भाई, विशद बनें सब शांति प्रदायि ॥

(शान्तये शान्तिधारा-3 दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

(कायोत्सर्गं करोम्यहं)

विसर्जन पाठ

भूल हुई हो जो कोई, जान के या अन्जान ।
बोधि हीन मैं हूँ विशद, क्षमा करो भगवान ।।
ज्ञान ध्यान शुभ आचरण, से भी हूँ मैं हीन ।
सर्व दोष का नाश हो, शुभाचरण हो लीन ।।
पूजा अर्चा में यहाँ, आए जो भी देव ।
करूँ विसर्जन भाव से, क्षमा करो जिन देव ।।

।। इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।।
(ठोने में पुष्पक्षेपण करें)

आशिका लेने का मंत्र

पूजा कर आराध्य की, धरे आशिका शीश ।
विशद कामना पूर्ण हो, पाएँ जिन आशीष ।।

पुष्पांजलिंक्षिपेत्

सर्व आचार्य परमेष्ठी अर्घ्य

पूर्वाचार्यश्री शांतिसागरजी, आदिसागराचार्यप्रवर ।
महावीर कीर्ति वीर सिन्धु शिव, विमल सिन्धु सन्मति सागर।।
भरत सिन्धु कुन्थुसागरजी, विद्यानन्द विद्यासागर ।
पुष्पदंत गुरु विराग सिन्धुपद, वंदन मेरा विशद सादर ।।

ॐ ह्रीं सर्व आचार्य परमेष्ठी चरण कमलेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आचार्य 108 श्री विशदसागरजी महाराज का अर्घ्य

प्रासुक अष्ट द्रव्य हे गुरुवर ! थाल सजाकर लाये हैं ।
महाव्रतों को धारण कर ले मन में भाव बनाये हैं ।।
विशद सिंधु के श्री चरणों में अर्घ समर्पित करते हैं ।
पद अनर्घ हो प्राप्त हमें गुरु चरणों में सिर धरते हैं ।।

ॐ हूँ क्षमामूर्ति आचार्य 108 श्री विशदसागरजी यतिवरेभयोः
अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दशलक्षण प्रतिक्रमण

॥ उत्तम क्षमा धर्म-1 ॥

हे भव्यात्मन् ! दशलक्षण पर्व में धर्म का प्रथम सोपान उत्तम क्षमा ही है इसके विपरीत अधर्म क्रोध कषाय है जो अनादिकाल से हमारी आत्मा के साथ रहकर थोड़ा सा निमित्त पाकर उत्तेजित हो जाती है। वचन से अपशब्द कहने लगते हैं। मन से ईर्ष्या भाव विचारने लगते हैं। अज्ञानी होकर हम सब क्रोध के दास बनकर काय से लाल पीले हो जाते हैं। क्रोध आने पर हम अपने स्वभाव से चलित हो जाते हैं। किसी कवि ने क्रोध आने पर क्षमा भाव कैसे धारण करें उसके संबंध में काव्य में कहा है कि-

"सोरठा"

"पीड़े दुष्ट अनेक, बाँध मार बहुविधि करै ।
धरिये छिमा विवेक, कोप न की जै पीतमा ॥"

हे भव्यात्मन् ! तुम्हे बहुत दुर्जन लोग दुःख देवें, बाँधकर अनेक प्रकार से मारपीट करें। यातनायें दें तो भी हे पवित्र आत्मा ! क्रोध को न करके विवेक पूर्वक उत्तम क्षमा को धारण करना।

उत्तम क्षमा इस भव में यश और अगले भव में स्वर्गादि सुख को देने वाली है, कोई अज्ञानी गुणों को अवगुण रूप भी कहता है। गालियाँ देता है अपशब्द भी बोलता है तो भी मन में खेद नहीं करना, दुखी नहीं होना कोई अज्ञानी दुष्ट प्रकृति का जीव अपशब्द कहता हुआ हमारी कोई वस्तु छीन लेवे, बाँध देवे, अनेक प्रकार से मारे, घर से निकाल देवे, शरीर का छेदन भेदन करे, तब भी उससे बैर भाव धारण नहीं करना। किन्तु उस समय चिन्तन करना कि पूर्व भवों में मैंने जो पाप कर्म का संचय किया था। पूर्व में जो पाप-अपराध किये थे उन पाप कर्मों का ही उदय आया है। अतः अत्यंत भीषण क्रोध रूपी अग्नि को भी हे भव्यात्मन ! समता रूपी अत्यंत शीतल जल से बुझाओ। अर्थात् क्रोध के समय 'विशद' समता भाव धारण करो।

''क्रोधादि कषाय भावों की आलोचना-प्रतिक्रमण''

हे भगवन ! मैंने दुष्ट अज्ञानी जीवों के द्वारा सताए जाने पर क्रोधावेश में आकर मन में खोटा विचार किया हो, मेरे मन में किसी के प्रति वैर-विरोध करने का भाव आया हो, मेरा यह विचार मिथ्या हो, उन सभी के प्रति मैं क्षमा भाव धारण करता हूँ।

हे भगवन् ! मैंने दुष्ट अज्ञानी जीवों के द्वारा सताए जाने पर कटु वचन कहे हों, गाली गलौज की हो, क्यों कि कहा गया है-

''जब हो जाता मनुज के, क्रोध भूत असवार ।
आँख बंद होती तुरत, खुलता मुख का द्वार ॥
खुलता मुख का द्वार, कहे कटु वचन कषाई ।
करके गालि गलौज, अग्नि वर्षावे भाई ! ॥
विशद सिन्धु कहते हैं, क्षमा हृदय में धरिए ।
धरके क्षमा हृदय में, सब जीवों को करिए ॥'

हे परमात्मा ! क्रोधावेश में हुआ मेरा यह दुष्कृत्य मिथ्या हो।

हे भगवन् ! मैंने दुष्ट अज्ञानी जीवों के द्वारा सताए जाने पर काय से कुचेष्टा की हो, आँखें लाल-लाल की हों, काय से कुचेष्टा की हो, हाथ-पैर के द्वारा किसी को सताया हो मेरा यह दुष्कृत्य मिथ्या हो।

हे भगवन् ! मैं विशद भाव से सभी जीवों को क्षमा करता हूँ, सभी जीवों से क्षमा चाहता हूँ सभी जीव मुझे क्षमा करें।

हे भगवन् ! मैंने क्रोध किया हो, कराया हो, करने वाले की अनुमोदना की हो तो अब मैं देव-शास्त्र-गुरू की साक्षी में नव कोटि से क्रोध को छोड़कर नव कोटि से क्षमा धारण करता हूँ।

हे भगवन् ! क्रोधादि कषायों के वशीभूत होकर मेरे द्वारा जो भी अपराध हुए वे सारे पाप, सारे अपराध मिथ्या हों।

तस्स मिच्छा में दुक्कड़ं

॥ जाप्य : ॐ ह्रीं उत्तम क्षमा धर्मांगाय नमः ॥

।। उत्तम मार्दव धर्म-2 ।।

मान महाविष रूप, करहि नीच गति जगत में ।
कोमल सुधा अनूप, सुख पावैं प्राणी सदा ।।

हे भव्यात्मन्! मान महाविष के समान है यह मान नीच गति अर्थात नरक गति ले जाने वाला है। अज्ञानी जीव ही मान करते हैं। कोमलता-मृदुता रूपी अनुपम अमृत को ग्रहण करने वाले जीव हमेशा सुख प्राप्त करते हैं। मान करने से नीच गोत्र का आश्रव बन्ध होता है।

हे भव्यात्मन ! पूर्व अवस्थाओं में यह जीव अनंत काल तक निगोद अवस्था में रहा कुछ पुण्योदय से वहाँ से आकर स्थावर वनस्पति काय का जीव हुआ। कभी दमरी (सबसे छोटी मुद्रा) के भाव बिक गया, कभी रूकन अर्थात् बिना मूल्य के ही बिक गया, भाग्य उदय से यह जीव देव हुआ और देव पर्याय से आकर एकेन्द्री हो गया, उत्तम पर्याय से चांडाल हुआ, राजा भी कीड़ों में जाकर उत्पन्न हो गया।

हे भव्यात्मन ! मार्दव का अर्थ है विनय भाव जो तीर्थंकर पद के सोपान सोलह कारण भावना में द्वितीय भावना है एवं अभ्यन्तर तप में द्वितीय तप है।

हे आत्मन्! फिर क्यों जीवन/युवावस्था और धन का धमंड करता है। ये सब जल के बुलबुले के समान क्षणभर में नष्ट होने वाले हैं। जिनमें बहुत गुण है अर्थात गुणवान हैं जिनकी बड़ी आयु है ऐसे माता-पिता व गुरुओं की विनय करना चाहिए, जिससे ज्ञान की प्राप्ति होती है। उत्तम मार्दव गुण मन को अच्छा लगने वाला धर्म है, सुगति का कारण है अतः उत्तम मार्दव धर्म विशद जीवन में अंगीकार कर। यह मानव जीवन सफल बनाने का प्रयत्न करना चाहिए।

विनय धर्म धारण किए, बनते सारे काज ।
विनयी जीवों का विशद, हो हर दिल पर राज ।।
हो हर दिल पर राज, सफलता हर दम पावें ।
अतः हृदय में ज्ञानी, हरदम विनय जगावें ।।
विशद सिन्धु कहते हैं, विनय हृदय में धरिए ।
मार्दव धर्मी बनिएँ, मान कभी न करिए ।।

"मान कषाय की आलोचना"

हे भगवन् ! मैंने मन से मान किया हो औरों से मान कराया हो मान करने वाले की अनुमोदना की हो मेरा वह दुष्कृत्य मिथ्या हो (तस्स मिच्छा में दुक्कड़ं)।

हे भगवन् ! मैंने वचन से मान के शब्द बोले हों औरों से बुलवाए हों, बोलने वाले की अनुमोदना की हो, मेरा यह दुष्कृत्य मिथ्या हो।

हे भगवन् ! मैंने कायकृत मान किया हो, औरों से कराया हो, मेरा यह दुष्कृत्य मिथ्या हो।

' मान करन ते मर गये, रहा न जिनका वंश।
हुए विशद बदनाम जो, रावण कौरव कंस ॥

हे भगवन् ! मान नीच गति का कारण कहा गया है, महाविषरूप है जिसके कारण अनंत संसार में मेरा भ्रमण हो रहा है, जिस मान के कारण महापुरुष भी दुर्गति के कारण बने हैं। उस मान को मैं मन, वचन, काय से छोड़ता हूँ। त्याग करता हूँ मन में विशद भावना भाता हूँ। मेरे मन में कभी मान उत्पन्न न हो।

हे भगवन् ! मेरे दुःखों का क्षय हो कर्मों का नाश हो, रत्नत्रय का लाभ हो, बोधि की प्राप्ति हो, सुगति में गमन हो, समाधि सहित मरण हो, जिनगुण सम्पत्ति की प्राप्ति हो, यही मेरी भावना है।

हे प्रभो ! नवकोटि से मान कषाय के अन्तर्गत जाने /अन्जाने में और जो भी दोष लगे हों तत्सम्बन्धी वे सारे दोष मिथ्या हों/ तस्स मिच्छा में दुक्कड़ं।

॥ जाप्य – ॐ ह्रीं उत्तम मार्दव धर्मांगाय नमः॥

हम भक्ति के फूल आपके नाम करते हैं ।
आपके द्वारा दिए आशीष को सलाम करते हैं ॥
बन जाए आपका जीवन विशद बसन्त बहार ।
यह दुआ आपके लिए सुबह शाम करते हैं ॥

।। उत्तम आर्जव धर्म – 3 ।।

सोरठा - ''कपट न कीजै कोय, चोरन के पुर ना बसै।
सरल सुभावी होय, ताके घर बहु संपदा।।''

हे भव्यात्मन् ! छल कपट नहीं करना चाहिए धन सम्पत्ति चोरों के यहाँ नहीं होती वे हमेशा निर्धन ही होते हैं, किन्तु जिनका स्वभाव सरल होता है जो छल प्रपंच से रहित होता है उनके यहाँ अपार धन सम्पदा होती है।

हे भव्यात्मन् ! पर्यूषण पर्व का तीसरा दिन उत्तम आर्जव धर्म का जिसके विपरीत माया कषाय है जो जीव के सरलता रूप गुण का घात करता है मायाचारी करने वाला स्वयं मन वचन काय से विकृत होता है और ओरों को भी कष्ट संकट में डाल देता है स्वयं दुःखी होकर औरों को भी दुःखी करता है।

हे भव्यात्मन् ! उत्तम आर्जव सरल स्वभाव को कहा गया है रंचमात्र भी दगा दुःख को देने वाला है जो विचार मन में हो वही वचन में रहना और जो वचन से कहा जाय वही काय से किया जाना चाहिए।

हे भव्यात्मन् ! निर्मल स्वच्छ दर्पण में जैसा अपना मुँह करोगे वैसा ही दिखेगा छल कपट की प्रीति अंगारों से प्रीति करने के समान है। जैसे अंगारों के ऊपर राख दिखती है और अन्दर अग्नि दहकती रहती है, अधिक छल कपट करके कोई भी धन सम्पदा प्राप्त नहीं कर सकता, बल्कि अधिक कर्म बंध करता है उस कर्मबंध का ध्यान नहीं करता और छल करता रहता है। जैसे बिल्ली आँख बंद करके दूध पीते समय भय का त्याग करती है और पीछे मार पड़ेगी ध्यान नहीं रखती उसी प्रकार छल करने वाला कर्मबंध का ध्यान नहीं रखते हुए छल करता रहता है।

मायाचारी जीव का, करे न कोइ विश्वास ।
इस पर भव के धर्म का, कर देता जो नाश ।।
कर देता जो नाश, दुखी औरों को करता ।
पर को कर बैचेन, चैन स्वयं का हरता ।।
विशद सिन्धु कहते हैं, छोड़ो मायाचारी ।
सरल स्वभावी होय, बनो पर के उपकारी ।।

।। मायाचारी भाव की आलोचना/प्रतिक्रमण।।

सोरठा - मायाचारी जीव के, होती गांठें तीन।
मन वच तन से हो कुटिल, होते है वे दीन।।

हे भगवन्! मैंने मन से मायाचारी की हो, औरों से कराई हो, करने वालों की अनुमोदना की हो, मेरा यह दुष्कृत्य मिथ्या हो।
तस्स मिच्छा में दुक्कड़ं।

हे भगवन्! मैंने मुख से मायाचारी के वचन बोले हो, औरों से बुलवाए हो या बोलने वालों की अनुमोदना की हो, मेरा यह दुष्कृत्य मिथ्या हो।
हे भगवन्! मैंने काय से मायाचारी की हो, कायकृत मायाचारी कराई हो या करने वालों की अनुमोदना की हो, मेरा यह दुष्कृत्य मिथ्या हो।

दोहा - माया ठगनी ने ठगा, है यह सारा लोक।
जिसने माया को ठगा, उसकी होती ढोक।।

हे भगवन्! मायाचारी तिर्यञ्च आयु बन्ध का कारण कहा गया है जिससे, पशुगति में जाकर जीव असह्य छेदन भेदन मारन तारण भूख प्यास आदि के दुःख पाते हैं अतः मेरे मन में मायाचारी का भाव नहीं आए मेरे द्वारा जाने अनजाने मायाचारी हुई हो मेरा यह दुष्कृत्य मिथ्या हो, मैं मायाचारी का त्याग करता हूँ। उत्तम आर्जव धर्म अर्थात् सरल स्वभावी होने की भावना भाता हूँ।

तिर्यञ्च गति में नित्य निगोद, इतर निगोद, पृथ्वी कायिक, जल कायिक, अग्नि कायिक, वायु कायिक 7-7 लाख, वनस्पति कायिक 10 लाख एवं त्रस जीव दो इन्द्रिय, तीन इन्द्रिय, चार इन्द्रिय 2-2 लाख असंज्ञी एवं संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव 14 लाख कुल , 72 लाख योनियों में जाकर भ्रमण करते हैं इस जीव ने 72 लाख योनियों में जाकर पूर्व में भ्रमण किया अब आगे उससे मुक्ती हो।

हे भगवन्! नव कोटि से मायाचारी करने से हुए मेरे सारे पाप मिथ्या हों तस्य मिच्छा में टुक्कड़ं।

।। जाप्य – ॐ ह्रीं उत्तम आर्जव धर्मांगाय नमः।।

॥ उत्तम शौच धर्म – 4 ॥

सोरठा - ''धरि हिरदै संतोष, करहु तपस्या देह सों।
शौच सदा निरदोष, धरम बड़ो संसार में॥''

हे भव्यात्मन् ! हृदय में संतोष धारण कर, शरीर से तपस्या करना चाहिए। दोष रहित शौच धर्म ही संसार में सबसे बड़ा धर्म है।

हे भव्यात्मन् ! पर्यूषण पर्व का चतुर्थ धर्म उत्तम शौच है इसके विपरीत लोभ कहा गया है जो परिग्रह पाप का कारण है, जीव के संतोष गुण का घात करता है। उत्तम शौच धर्म लोभ कषाय के अभाव में होता है। लोभ सर्व पापों को उत्पन्न करने वाला है। आशा इच्छा रूपी पाश भयानक दुःखों को देने वाली है। अतः संतोष को धारण करने वाले जीव सुख को प्राप्त करते हैं। इस जीव की शुचिता-पवित्रता शील, जप, तप, ज्ञान, ध्यान के प्रभाव से होती है। हमेशा गंगा, यमुना आदि नदियों में एवं समुद्र में भी स्नान करने से शुचिता अर्थात् पवित्रता नहीं होती क्योंकि इस शरीर का स्वभाव ही अपवित्र है। यह ऊपर तो अत्यन्त निर्मल दिखता है परन्तु, इसके अन्दर मल भरा हुआ है ऐसे शरीर को किस प्रकार पवित्र कहा जा सकता है जिनका शरीर तो मलिन है पर जो गुणों के भण्डार है ऐसे महाव्रती साधु ही इस शौच गुण को प्राप्त करते हैं। कहा भी हैं

दोहा - दिपे चाम चादर मड़ी, हाड़ पींजरा देह।
भीतर या सब जगत में, और नहीं घिन गेह॥

'फिसलना नहीं कभी चमड़ी की चिकनाई पर।
वर्क सोने का चढ़ा है, गोबर की मिठाई पर॥'

अर्थात् - जिस प्रकार गोबर की मिठाई हो और उस पर वर्क सोने का चढ़ा दिया जाए तो सुन्दर दिखती है किन्तु बदबू और ग्लानी युक्त होती जो मन में घृणा पैदा करती है उसी प्रकार शरीर पर चमड़ी रूपी वर्क चढ़ा है परन्तु अंदर में मल मूत्र रुधिर अस्थियों का पिण्ड है जिसकी कल्पना करने मात्र से ग्लानी उत्पन्न होती है।

।। लोभ कषाय की आलोचना/प्रतिक्रमण ।।

हे भगवन् ! मैने पर वस्तु का लोभ किया हो, औरों से करवाया हो, करने वालों की अनुमोदना की हो, मेरा यह दुष्कृत्य मिथ्या हो।

हे भगवन् ! मैंने मुख से लोभ के वचन कहे हो, औरों से कहलवाए हों या कहने वालों की अनुमोदना की हो, मेरा यह दुष्कृत्य मिथ्या हो।

हे भगवन् ! मैंने काय से लोभ की क्रिया की हो, औरों से लोभ की क्रिया कराई हो या लोभकृत क्रिया की अनुमोदना की हो, मेरा यह दुष्कृत्य मिथ्या हो।

''जिन्दगी है छोटी सी,बड़े-बड़े हैं अरमान।
विशद पूर्ण न हो कभी, निकल जायेंगे प्राण ।।''

हे भगवन् ! लोभ में आकर मैंने जीवों की हिंसा की हो, झूठ बोला हो, चोरी की हो, कुशील किया हो, परिग्रह संग्रह किया हो, मेरे मन में पाँच पाप करने का भाव आया हो, वचन से पाप वर्धक वचन बोले हों, काय से पाप कार्य किया हो, मेरा यह दुष्कृत्य मिथ्या हो। कहा भी हैं -

दोहा - आशा ठगनी ने ठगा, है सारा संसार।
जिसने आशा को ठगा, हुआ विशद भव पार।।

हे परमात्मा ! मैं यह पाप नहीं करना चाहता था किन्तु मेरी लोभी वृत्ती के कारण भारी पाप हुआ, अब मैं देवशास्त्र गुरु की साक्षी में उसका परिहार करता हूँ। मेरे द्वारा नव कोटि से हुए सभी पाप मिथ्या हों।

तस्स मिच्छा में दुक्कडं।

।। जाप्य – ॐ ह्रीं उत्तम शौच धर्मांगाय नमः।।

हम भक्ति के फूल, आपके नाम करते हैं।
आपकी मुस्कराहट को, सलाम करते हैं।।
बन जाए आपकी जिन्दगी, खुशियों का उपवन।
यह दुआ आपके लिए हम, सुबह शाम करते हैं।।

॥ उत्तम सत्य धर्म – 5 ॥

सोरठा

''कठिन वचन मत बोल, पर निंदा अरु झूठ तज।
साँच जवाहर खोल, सतवादी जग में सुखी॥

हे भव्यात्मन्! कठोर वचन, पर निंदा और झूठ वचनों का त्याग करना सत्य धर्म है। सत्य रूपी जवाहर रत्न का उपयोग करना चाहिए, क्योंकि सत्यवादी प्राणी संसार में सदा सुखी रहते हैं।

हे भव्यात्मन्! उत्तम सत्य धर्म पालन करना चाहिए, दूसरों का विश्वासघात नहीं करना चाहिए। सत्यवादी और झूठे मनुष्यों को देखो। झूठ बोलने वाले अपने पुत्र पर भी विश्वास नहीं करते अर्थात झूठे व्यक्तियों पर कोई विश्वास नहीं करता। निःस्वार्थ सत्यवादी का सभी विश्वास करते है और अमानत स्वरूप धन भी देते हैं। मुनिराजों की और श्रावकों की प्रतिष्ठा, इज्जत सत्य गुण से, सत्य धर्म से ही है। राजा वसु ऊँचे सिंहासन पर बैठकर न्याय करता था। मात्र एक झूठ बोलने के कारण से नरक में गया और सत्य बोलने वाला नारद स्वर्ग में गया।

हे भव्यात्मन! हमने आज तक सच्चे और झूठे मनुष्य ही देखे हैं लेकिन अपने आत्मा के पवित्र स्वभाव के पास जाकर नहीं देखा, निश्चयनय से सत्य धर्म का लक्षण आत्मा का सत् स्वरूप ही है।

हे भव्यात्मन्! सत्य वचन नहीं अभिप्राय सत्य होता है जो वचन बोले गये वे किस अभिप्राय से बोले गये उसी अभिप्राय से ग्रहण करे तभी सत्य होगा क्यो कि वचन वर्गनाएँ खिरते ही समाप्त हो जाती हैं उन शब्दों से प्राप्त अभिप्राय को ग्रहण करके जीव भव-भव में उस रूप कार्य करते रहते हैं।

'असत्य भाव की आलोचना-प्रतिक्रमण''

हे भगवन्! मेरे मन में असत्य बोलने का भाव आया हो औरों से बुलवाने का भाव आया हो, बोलने वाले की प्रशंसा की हो, कराई हो, करने वाले की अनुमोदना की हो। मेरा यह दुष्कृत्य मिथ्या हो।

हे भगवन्! मैंने वचन से असत्य बोला हो औरों से असत्य भाषण कराया हो, असत्य बोलने वाले की अनुमोदना की हो, सराहना/प्रशंसा की हो, मेरा यह दुष्कृत्य मिथ्या हो।

हे भगवन्! मैंने काय से असत्य वचन कहने की चेष्टा की हो, कराई हो, असत्य वचन कहने वाले की प्रशंसा/अनुमोदना की हो, मेरा यह दुष्कृत्य मिथ्या हो।

दोहा : ''वाणी में यदि एक भी, अक्षर पीड़ाकार।
किए पूर्व के जो विशद, क्षय होंगे उपकार।।''

एक बार भी बोले गए असत्य से लोगों का विश्वास समाप्त हो जाता है फिर कोई सम्मान नहीं रह पाता है। अतः मैं असत्य का परित्याग करता हूँ।

हे भगवन्! मेरे द्वारा कषायावेश में किसी के प्रति भी कठोर निन्द्य कटुक वचन बोले गए हों, वे सभी जीव मेरे लिए क्षमा करें।

दोहा : ''मधुर वचन है औषधि, कटुक वचन है तीर।
कर्ण द्वार के संचरे, साले शकल शरीर।।''

हे भगवन्! मन वचन काय कृत कारित अनुमोदना से सत्य व्रत में जो भी दोष जाने अनजाने में लगे हों, वे सभी दोष मिथ्या हो।

तस्स मिच्छा में दुक्कड़ं।

।। जाप्य – ॐ ह्रीं उत्तम सत्य धर्मांगाय नमः।।

॥ उत्तम संयम धर्म – 6 ॥

सोरठा

"काय छहों प्रतिपाल, पंचेन्द्री मन वश करो।
संयम रतन संभाल, विषय चोर बहु फिरत हैं॥"

हे भव्यात्मन्! छह काय के जीवों की रक्षा करना एवं पाँच इंद्रिय और मन को वश में करना उत्तम संयम धर्म है। संयम रूपी रत्न को संभाल कर रखना चाहिए, क्योंकि विषय वासना रूपी बहुत चोर घूम रहे हैं।

हे भव्यात्मन् ! पर्यूषण पर्व का छठवाँ दिन उत्तम संयम धर्म। इसके विपरीत असंयम है जो संसार भ्रमण का कारण है। अब तक हम संसार में जन्म पाकर चार गति चौरासी लाख योनि में भ्रमण कर रहे हैं उसका मुख्य कारण सम्यक्त्व सहित संयम धारण नहीं कर सके, असंयम के कारण पराधीन बने रहे।

हे भव्यात्मन ! उत्तम संयम धर्म को मनोयोग से जीवन में धारण कर। उत्तम संयम जीवन में धारण करने से अनेक भवों के पाप नष्ट हो जाते हैं। यह संयम स्वर्ग नरक और तिर्यञ्च गति में नहीं है। यह संयम आलस को हरण करने वाला और सुख को करने वाला है। पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और वनस्पति ये स्थावर और त्रस इन छह काय के जीवों पर दया भाव धारण कर स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु, कर्ण और मन को वश करना संयम धर्म है। इस संयम के बिना तीर्थंकर भी मोक्ष को प्राप्त नहीं हुए और जिसने संयम धारण नहीं किया वह आत्मा संसार रूपी कीचड़ में ही फँसा रहता है। हमें इस संयम को एक क्षण भी नहीं भूलना चाहिए। कहाँ भी गया है

आचारः परमं धर्मः, आचारः परमम् तपः।
आचारः परमं ज्ञानं, आचारं किंन साधयेत॥

अर्थातः आचार (संयम) ही परं धर्म है आचार ही परम तप है आचार ही परमज्ञान है अतः विशद आचार अर्थात संयम की साधना क्यों नहीं करते।

''असंयम भाव की आलोचना / प्रतिक्रमण''

हे भगवन् ! प्राणी संयम के अंतर्गत एकेन्द्रिय पृथ्वी कायिक, जल कायिक, अग्नि कायिक, वायु कायिक, सभी असंख्यात एवं वनस्पति कायिक, अनंत जीव एवं त्रस काय असंख्यात जीवों की रक्षा नहीं की हो, अपने प्रमाद के कारण उन्हें कष्ट दिया हो, मेरे द्वारा सताए गए हों , दुःख पाए हों, वे जीव वर्तमान पर्याय में 84 लाख योनियों में जहाँ कही भी हों वे सब जीव हमें क्षमा करें, हम उनसे अत्यंत विनयपूर्वक क्षमा माँगते हैं और उन्हें क्षमा करते हैं।

हे भगवन् ! इंद्रिय संयम के अंतर्गत स्पर्शन इंद्रिय के हल्का-भारी, कड़ा-नरम रूखा, चिकना, ठंडा-गरम ये 8 विषय। रसना इंद्रिय के खट्टा, मीठा, कड़वा, कषायला, चरपरा पंच विषय। घ्राणेन्द्रिय के सुगंध, दुर्गन्ध। चक्षु इंद्रिय के काला, पीला, नीला, लाल, सफेद, पाँच विषय एवं कर्णेन्द्रिय के सा रे गा मा पा धा नि ये सप्त विषय एवं मन का श्रुत ज्ञान सर्व अट्ठाइस विषयों के वशीभूत होकर विषयों में प्रवृत्ति की हो, अपने हृदय में संयम धारण न किया हो, उसकी क्षमा चाहते हैं। पुनः संयम धारण के भाव बनाते हैं।

हे भगवन् ! मेरे द्वारा इंद्रिय संयम एवं प्राणी संयम व्रत के अंतर्गत जो भी दोष लगे हों सभी दोष मिथ्या हों।

तस्स मिच्छा में दुक्कड़ं।

।। जाप्य – ॐ ह्रीं उत्तम संयम धर्मांगाय नमः।।

मेरे गुरुवर सितारों में, चाँद की तरह हो तुम।
उपवन में फूलों की महक हो तुम ।।
औरो का पता तो नही मेरे गुरुवर,
मेरे लिए तो ज्ञान के हिमालय की तरह हो तुम ।।

॥ उत्तम तप धर्म – 7 ॥

हे भव्यात्मन् ! पर्वराज पर्यूषण का सप्तम दिन उत्तम तप धर्म इसके विपरीत है। कुतप जो मात्र काय क्लेश का ही कारण है। जिसको संसार में भ्रमण कर बारम्बार धारण किया, किन्तु मोक्ष का मार्ग प्रशस्त नहीं हो सका। अब मैंने श्री देव-शास्त्र-गुरु के द्वारा सम्यक् तप को जाना है तो वह तप धारण करने का भाव बनाता हूँ ।

सोरठा :

''तप चाहे सुरराय, करम शिखर को वज्र है।
द्वादश विधि सुखदाय, क्यों न करै निज सकति सम ॥''

हे भव्यात्मन ! उत्तम तप को देवों के राजा इंद्र भी चाहते हैं। यह तप कर्म रूपी पर्वत को नष्ट करने के लिए वज्र के समान है। यह शिव सुख देने वाला तप बारह प्रकार का है। इन तपों को अपनी शक्ति के अनुसार क्यों धारण नहीं करते हो।

हे भव्यात्मन ! उत्तम तप कर्म रूपी पर्वत को नष्ट करने के लिए वज्र के समान है। अनादिकाल से यह जीव निगोद में रहा। वहाँ से निकलकर पृथ्वी आदि स्थावर हुआ। पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, वनस्पति पंच स्थावर के बाद त्रस पर्याय में विकलेन्द्री हुआ और फिर पशुओं (तिर्यञ्चों) के शरीर को धारण किया। अब पुण्य योग से यह दुर्लभ मनुष्य पर्याय प्राप्त की है। उसमें भी उच्च कुल, पूर्ण आयु, निरोग शरीर, जिनवाणी का संयोग, तत्त्व ज्ञान, गुरुओं की संगति, आत्म चिंतन में उपयोग अत्यंत दुर्लभता से प्राप्त किया है।

तप का लक्षण आचार्यों ने कहा हैं

''कर्म क्षयार्थं तप्यते इति तप ''

अर्थात : कर्मों के क्षय करने को जो तपा जाता है उसे तप कहते है यह विशद तप जो मोक्ष में कारण है वह मात्र मनुष्य गति में ही धारण किया जाता है।

हे भव्यात्मन् ! जो भी जीव अत्यंत महादुर्लभ विषय और कषाय का त्याग कर तप को आदरपूर्वक ग्रहण करते हैं। वे मनुष्य भवरूपी स्वर्ण गृह पर रत्नमयी कलशा चढ़ाते हैं अर्थात् नर जन्म धन्य करते हैं।

“12 तप में लगे दोषों की आलोचना/प्रतिक्रमण”

हे भगवन्!

1. मेरे द्वारा अनशन तप धारण करने में मन से, वचन से, काय से कोई दोष लगा हो, वह दोष मिथ्या हो।
2. हे भगवन्! उनोदर तप के अंतर्गत इच्छा से कम भोजन करने से मन, वचन, काय के द्वारा कोई दोष लगा हो, वह दोष मिथ्या हो, हम क्षमा चाहते हैं ।
3. हे भगवन् ! रस परित्याग तप धारण में रसों का त्याग करने में मन, वचन, काय से कोई दोष लगा हो, वह दोष मिथ्या हो, हम क्षमा चाहते हैं।
4. हे भगवन्! वृति परिसंख्यान तप के अंतर्गत आहार में वस्तु की मर्यादा का उल्लंघन हो गया हो तो उसकी त्रियोग से क्षमा चाहते हैं।
5. हे भगवन् ! विविक्त शैय्यासन तप के अंतर्गत शैय्या और आसन को देखकर राग-द्वेष उत्पन्न हुआ हो उसकी त्रियोग से क्षमा चाहते हैं।
6. हे भगवन्! काय क्लेश तप धारण करने पर काय के प्रति राग उत्पन्न हुआ हो, उसकी त्रियोग से क्षमा चाहते हैं। इस प्रकार से 6 अभ्यंतर तप के अंतर्गत दोष लगे हों, प्रायश्चित ग्रहण करने में मायाचारी की हो, झूठ बोला हो छः प्रकार के तप का सही से पालन नहीं किया हो उसकी क्षमा चाहते हैं एवं देव-शास्त्र-गुरु की विनय में मन-वचन-काय से प्रमाद किया हो, उसकी क्षमा चाहते हैं।
7. हे भगवन् ! अभ्यंतर तप के अंतर्गत प्रायश्चित ग्रहण करने में मायाचारी की हो, झूठ बोला गया हो, उसका पालन नहीं किया हो, तत्संबंधी मेरा दोष मिथ्या हो।
8. हे भगवन्! देव-शास्त्र-गुरु की विनय करने में त्रय योग से जो दोष लगे हो वह दोष मिथ्या हो।

9. हे भगवन् ! वैय्यावृत्ती तप के अंतर्गत 10 प्रकार के साधुओं की वैय्यावृत्ती तप करने में प्रमाद किया हो, जिसकी क्षमा चाहते हैं।

10. हे भगवन् ! मेरे द्वारा स्वाध्याय करने में प्रमाद किया हो या स्वाध्याय में हीनाधिक शब्दार्थ ग्रहण किए हों, उसकी क्षमा चाहते हैं।

11. हे भगवन् ! व्युत्सर्ग तप के अंतर्गत कायोत्सर्ग करते समय शरीर के प्रति राग से कोई दोष लगा हो, उसकी क्षमा चाहते हैं।

12. हे भगवन् ! ध्यान तप के अंतर्गत धर्म ध्यान करने में प्रमाद किया हो या मन विचलित हुआ हो उसके लिए क्षमा चाहते हैं ।

इस प्रकार उत्तम तप धारण में हुए सर्व दोष के लिए क्षमा चाहते हैं ।

हे भगवन् ! मेरे द्वारा 12 प्रकार के तप के पालन करने में जाने अनजाने में जो भी दोष लगे हों वे सारे दोष मिथ्या हों।

तस्स मिच्छा में दुक्कड़ं।

।। जाप्य – ॐ ह्रीं उत्तम तप धर्मांगाय नमः।।

सारी जिन्दगी रिश्ता निभाया हमने ।
यूँ ही समय बीत गया कुछ न पाया हमने ।।
लोग कहते हैं आप सबका भला करते हो ।
औरों का भला करने में धोखा खाया हमने ।।

प्रेम की फुहार आपके नाम करते हैं ।
खुशी की बहार आपके नाम करते हैं ।।
बन जाए आपकी जिन्दगी उपवन की बहार ।
यह उपहार हम आपके नाम करते हैं ।।

॥ उत्तम त्याग धर्म – 8 ॥

सोरठा

दान चार परकार, चार संघ को दीजिए।
धन बिजुली उनहार, नर-भव लाहो लीजिए॥''

हे भव्यात्मा ! दान चार प्रकार के होते हैं ये चारों दान चार संघ अर्थात मुनि, आर्यिका, श्रावक, श्राविका को देना चाहिए। धन, संपत्ति, वैभव बिजली की चमक की तरह चंचल है। अतः चार प्रकार का दान कर मनुष्य भव को सार्थक बनाना चाहिए।

चार दान में सर्व श्रेष्ठ दान आहार दान है जिसमें चारों दान समाहित हैं प्रथम आहार दान है वही द्वितिय साधू की प्रकृति जानकर मौसम के अनुसार आहार देने से स्वास्थ्य अनुकूल रहता है अतः औषधि दान हुआ। आहार होने से शरीर में शक्ति प्राप्त होती है ऊर्जा आने से ज्ञान में स्थिरता एवं ज्ञान में वृद्धि होती है।

चौथा भोजन प्राप्त होने पर ही जीवन चलता है अतः अभयदान हो जाता है अतः भव्य जीवों को आहार दान में अवश्य रुचि रखना चाहिए।

हे भव्यात्मन् ! उत्तम त्याग समस्त संसार में श्रेष्ठ है। ये दान आहार दान, औषधि दान, शास्त्र दान, अभय दान के भेद से चार प्रकार का है। यह तो व्यवहार त्याग है। निश्चय त्याग तो राग द्वेष के त्याग को कहते हैं। ज्ञानीजन दोनों दान (निश्चय और व्यवहार) करते हैं। कुएँ का पानी यदि खर्च न हो तो खराब हो जाता है और यदि खर्च होता रहे तो पानी खराब नहीं होता। उसी प्रकार घर में धन, संपत्ति, वैभव हो तो दान करना चाहिए, जो श्रेष्ठ है, नहीं तो नष्ट हो जाएगा, स्थिर रहने वाला नहीं है। धन्य हैं वे साधु जो ज्ञान दान-अभय दान देने वाले है और राग-द्वेष का त्याग करने वाले हैं। बिना दान के श्रावक और साधु दोनों ही सम्यक् ज्ञान को प्राप्त नहीं होते।

सम्यग्ज्ञान के अभाव में न तो भेद ज्ञान प्राप्त होता है और न ही सम्यक् चारित्र का समीचीन पालन होता है अतः विशद आत्म विशुद्धि के लिए उत्तम त्याग धर्म धारण कर जीवन सफल बनाना चाहिए।

''उत्तम त्याग धर्म में लगे दोषों की आलोचना-प्रतिक्रमण''

हे भगवन् ! त्याग धर्म के अंतर्गत चार प्रकार का दान कहा गया है। आहार दान, औषधि दान, शास्त्र दान, अभय दान। प्रथम आहार दान में मेरे द्वारा नवधा भक्तिपूर्वक पड़गाहन, उच्चासन, पाद प्रच्छालन, पूजा, नमस्कार, मन शुद्धि, वचन शुद्धि, काय शुद्धि में हीनाधिकता की हो, नवधा भक्ति करने में मन, वचन, काय से दोष लगे हों एवं दाता के सप्त गुणों से हीन होकर आहार दान दिया हो अथवा ओखली, चक्की बुहारी, चूल्हा, घिनौची आदि पंच सूनापूर्वक आहार दिया हो। आहार दान देकर क्रोध किया हो, मान किया हो, मायाचारी की हो, लोभ किया हो, तत्संबंधी मेरा यह दुष्कृत्य मिथ्या हो।

हे भगवन् ! मेरे द्वारा औषधि दान के अंतर्गत प्रमाद हुआ हो, यह शरीर रोगों का घर है इसके एक अंगुल प्रमाण जगह में 96 रोग भरे हुए हैं जिसके कारण साधू की साधना में बाधा उत्पन्न हुई हो, उनके रोग का शमन करने के लिए औषधि दान आवश्यक है जो निर्दोष दिया जाता है फिर भी किसी कारणवश दोष लगा हो तो हम मन-वचन-काय से क्षमा चाहते हैं।

हे भगवन् ! मोक्ष मार्ग में रत्नत्रय की प्राप्ति आवश्यक है। सम्यक दर्शन, सम्यग्यज्ञानं, सम्यक् चारित्र के अंतर्गत सम्यक् ज्ञान का हेतु शास्त्र है जो मुनियों की साधना में हेतु है, कहा भी है- ''**स्वाध्याय परमं तपः**'' अर्थात् स्वाध्याय परम है अतः स्वाध्याय हेतु शास्त्र दान में कंजूसी की हो या शास्त्रों की सुरक्षा नहीं की हो, मेरा यह दुष्कृत्य मिथ्या हो।

हे भगवन् ! अभय दान के अंतर्गत साधुओं के एकान्त स्थान, गुफा, कोटर, संत निलय, स्तूप आदि स्थान देने में किसी प्रकार से लोभ किया हो, दोषों से युक्त वसतिका प्रदान की हो, प्राणियों को अभय दान नहीं दिया तत्तसंबंधी हुए सभी दोषों की मैं क्षमा चाहता हूँ। मेरा यह अपराध मिथ्या हो, चारों प्रकार के दान देने में जाने अनजाने में जो भी दोष लगे हों, वे दोष मिथ्या हों।

तस्स मिच्छा में दुक्कड़ं ।

।। जाप्य – ॐ ह्रीं उत्तम त्याग धर्मांगाय नमः।।

उत्तम आकिञ्चन्य – 9

सोरठा

"परिग्रह चौबिस भेद, त्याग करें मुनिराज जी।
तिसना भाव उछेद, घटती जान घटाइये ॥"

हे भव्यात्मन् ! मिथ्यात्व, चारकषाय तथा नौ नोकषाय यह 14 प्रकार का अंतरंग परिग्रह और खेत-मकान, रुपया, सोना, गोधन, अनाज, दासी-दास, कपड़े तथा बर्तन ये 10 प्रकार का बाह्य परिग्रह कहा गया है। मुनिराज चौबीस प्रकार के परिग्रह का त्याग करते हैं, यह व्यवहार आकिञ्चन है और तृष्णा भाव को नष्ट करना निश्चय आकिञ्चन है। अतः अभ्यास कर परिग्रह घटाना चाहिए। उत्तम आकिञ्चन श्रेष्ठ गुण है परिग्रह चिन्ता दुःख के ही हेतु हैं, छोटी सी फाँस भी पूरे शरीर को दुःखी कर देती है उसी प्रकार लंगोटी का आवरण या लंगोटी की चाह दुःख को देने वाली होती है। यह मनुष्य महाव्रत अर्थात् निग्रन्थ दिगम्बर मुनि की मुद्रा को धारण किये बिना समता और सुख को प्राप्त नहीं कर सकते। वे मुनिराज धन्य हैं जो पर्वतों पर नग्न खड़े रहकर तप करते हैं उनके चरणों की पूजा सुर-असुर आदि सभी करते हैं। घर में रहते हुए भी जो तृष्णा को घटाते हैं तथा जिनको संसार में रुचि नहीं है। ऐसे जीवों का धन यद्यपि बुरा ही होता है, किन्तु परोपकार में लगने के कारण फिर भी अच्छा कहा जा सकता है। कहा भी है

गतियाँ धन की तीन हैं दान भोग और नाश।
दान भोग में न लगे तो, निश्चय होय विनाश ॥

अर्थात् : धन की 3 - गतियाँ कही गई हैं दान भोग ओर नाश सर्व श्रेष्ठ उपयोग सुदान है मध्यम उपयोग भोग है और अन्य कार्य में हुआ उपयोग अधर्म कहा गया है अतः हे भव्यात्मन् ! विशद भावों से सर्व परिग्रह का त्याग करो।

हे भव्यात्मन ! पर्वराज पर्यूषण का नौवा दिन उत्तम आकिञ्चन्य धर्म

''न किन्चन इति आकिन्चन्य''

अहो आत्मन् ! यह लोक छह द्रव्यों जीव, पुदगल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल से पूरित है, जिसमें जीव और पुदगल ये दो द्रव्य विशेष हैं जीव और कर्म पुदगल के संयोग का नाम ही संसार है। मोह से मोहित होकर जीव शरीर में ही अपनत्व मान रहा है। यह सबसे बड़ी भूल है।

अहो आत्मन् ! जो जो वस्तु दिखाई दे रही है, उनमें ही संसारी जीव अपनत्व मानते हैं किन्तु इस सत्य का चिंतन करो जो जो कुछ आपको दिखाई दे रहा है वह आपका अपना नहीं है और जो आपका अपना है वह दिखाई नहीं दे रहा है क्योंकि हम और आप सभी निश्चय से शुद्धात्मा स्वरूप हैं जो अमूर्त है वह चर्म चक्षु से नहीं देखी जा सकती है शुद्ध स्वरूप को जानने के लिए तो विशद ज्ञान चक्षु को जागरण करना होगा।

अहो आत्मन् ! यह सिद्ध हो गया कि शरीर से आत्मा बिल्कुल भिन्न है शरीर से सम्बन्धित पदार्थ घर, परिवार, धन-सम्पति, वाहन आदि हमारी आत्मा से सर्वथा भिन्न हैं उन से किन्चित भी हमारा सम्बन्ध नहीं है मात्र राग वशात उन पदार्थों को अपना मानते हैं, जो हमारी भूल है इसी भूल के कारण हमारा संसार भ्रमण चल रहा है। कहा भी है।

जल पय ज्यों जिय तन मेला, पे भिन्न भिन्न नहीं भेला।
तो प्रकट जुदे धन धामा, क्यों है इक मिल सुत रामा ॥

अहो आत्मन् ! आज मुझे इस विशद सत्य का ज्ञान हो गया है अतः मैं उन पदार्थों से विरक्त होता हूँ, उनसे लगे राग का परित्याग करता हूँ।

हे भगवन् ! मैने पर पदार्थ में अपनत्व मानकर जो सम्यदर्शन, सम्यग्ज्ञान एवं सम्यग्चरित्र में दोष लगाए हों वे सब मिथ्या हो।

उत्तम आकिञ्चन्य धर्म में लगे

दोषों की आलोचना/प्रतिक्रमण

हे भगवन्! मेरे द्वारा 14 प्रकार के अभ्यन्तर परिग्रह एवं 10 प्रकार के बहिरंग परिग्रह के अन्तर्गत जो दोष लगे हों वह दोष मिथ्या हों।

हे भगवन्! बहिरंग परिग्रह के अन्तर्गत खेत, मकान की संख्या मर्यादा में वृद्धि की हो, दिशाओं का व्यतिक्रम किया हो, मर्यादा को भुला दिया हो, मेरा यह दोष मिथ्या हो।

हे भगवन्! मेरे द्वारा सोना-चाँदी की ली गई मर्यादा का उल्लंघन किया हो, मेरा यह दोष मिथ्या हो।

मेरे द्वारा दास-दासी की ली गई मर्यादा का उल्लंघन किया हो, ली गई मर्यादा में हीनाधिकता की हो मेरा यह दोष मिथ्या हो।

हे भगवन् ! मेरे द्वारा जो धन-धान्य की मर्यादा ली गई हो उसमें हीनाधिक किया हो, मर्यादा को भुला दिया हो, मर्यादा का लालचवश उल्लंघन किया हो, मेरा यह दोष कृत्य मिथ्या हो।

हे भगवन्! मेरे द्वारा कपड़े और बर्तन आदि की मर्यादा में हीनाधिक किया हो, परिवर्तन किया हो, ली गई मर्यादा को भुला दिया हो, मेरा यह भाव नहीं था मेरी अज्ञानतावश जो दोष लगा हो, वह मिथ्या हो।

हे भगवन् ! अभ्यन्तर परिग्रह के अन्तर्गत मिथ्यात्व का मन में भाव आया हो, मेरा यह दुष्कृत्य मिथ्या हो।

हे भगवन्! मेरे द्वारा क्रोध किया गया हो, मैने मान किया हो, मायाचारी की हो, व्यर्थ कार्य में लोभ किया हो, मेरा यह दुष्कृत्य मिथ्या हो।

हे भगवन्! नो कषाय के अन्तर्गत हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्री वेद, पुरुष वेद, नपुंसक वेद के विरोधी परिणाम किए हों मेरा यह दुष्कृत्य मिथ्या हो।

तस्य मिच्छा में दुक्कड़ं

॥जाप्य : ॐ ह्रीं उत्तम आकिञ्चन्य धर्मांगाय नमः ॥

॥ उत्तम ब्रह्मचर्य – 10 ॥

सोरठा

शील बाढ़ नौ राख, ब्रम्ह-भाव अन्तर लखो।
करि दोनों अभिलाख, करहु सफल नर भाव सदा॥''

हे भव्यात्मा ! शील को नौ बाड़े लगाकर सुरक्षित रखना चाहिए (व्यवहार ब्रह्मचर्य) और अन्तर में ब्रम्ह शील की नौ बाड़ों की एवं आत्मचिन्तन इन दोनों की प्राप्ति के अभिलाषी बनकर मनुष्य जन्म सफल करना चाहिए।

हे भव्यात्मन् ! उत्तम ब्रह्मचर्य मन में धारण कर माता, बहिन और पुत्री की पहचान करना चाहिए। यह जीव रणभूमि में सूरवीरों द्वारा की जाने वाली वाणों की वर्षा को सहन कर लेता है, परन्तु स्त्रियों के क्रूर नेत्र रूपी वाण को सहन नहीं कर पाता ऐसा काम रोग से पीड़ित स्त्री के अपवित्र शरीर में रति (प्रेम) करता है। जिस प्रकार श्मसान में मरे हुए, सड़े हु ए शरीर में कौआ प्रेम करके चौंच से मृत शरीर को खाता है। संसार में स्त्री विषबेल के समान है। इसलिए सभी मुनिराजों ने स्त्रियों का त्याग कर दिया। ये दशलक्षण रूपी सीढ़ियाँ ही मोक्ष रूपी महल में प्रवेश कराने में सहयोगी हैं।

हे भव्यात्मन् ! पर्यूषण पर्व का दशवाँ दिन उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म

''**ब्रह्माणि आत्मनि आचरतीति ब्रह्मचर्यम**''

अर्थात् आत्मा में रमण करना आत्मा में लीन होना ब्रह्मचर्य है, ब्रह्मचर्य धर्म सर्व प्रधान धर्म है, सर्व व्रतों में प्रधान है।

हे भव्यात्मन् ! आगम में स्पर्शन और रसना ये दो कामेन्द्रियाँ कही गयी हैं, इन पर विजय करने से ही ब्रह्मचर्य व्रत पालन किया जा सकता है।

हे भव्यात्मन् ! संसार में जो पाँच प्रकार के पाप कहे गये हैं, उनमें चौथा कुशील पाप कहा गया है, कुशील अर्थात् जहाँ शील स्वभाव विनाश होता है, भंग होता है वह कुशील है। कुशील पाप में सभी पाँचों पाप गर्भित हो जाते हैं।

हे भगवन् ! मेरे द्वारा कुशील सेवन की इच्छा की गई हो तत्सम्बन्धी जो भी पाप लगे हों , वे सब मिथ्या हो।

''उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म में लगे दोषों की आलोचना/प्रतिक्रमण''

हे भगवन् ! मेरे द्वारा अब्रह्म सेवन किया गया हो अथवा ब्रह्मचर्य व्रत के पाँच अतिचार कहे गये हैं जिनके अन्तर्गत-प्रथम पर विवाह करण में स्वजन परिजन का विवाह कराया हो, करने वाले की अनुमोदना की हो मेरा यह दुष्कृत्य मिथ्या हो।

द्वितीय - परिगृहीत स्त्री (पुरुष) से संबंध बनाये हों औरों से संबंध बनवाए हों, संबंध बनाने वालों की अनुमोदना की हो मेरा यह दुष्कृत्य मिथ्या हो।

तृतिय- अपरिगृहीत स्त्री (पुरुष) से संबंध बनाये हो, औरों से संबंध बनवाए हों, संबंध बनाने वालों की अनुमोदना की हो, मेरा यह दुष्कृत्य मिथ्या हो।

चतुर्थ - मेरे द्वारा अनंग क्रीड़ा की गई हो अर्थात् शरीर के अन्य अंगों से कुचेष्टा की गई हो मेरा यह दुष्कृत्य मिथ्या हो।

पंचम - काम तीव्राभिनिवेश के अंगर्गत काम की तीव्र भावना रखी हो औरों में काम भावना जगाई हो, काम भावना करने वाले की अनुमोदना की हो। तत्संबंधी मेरा यह दुष्कृत्य मिथ्या हो।

हे भगवन्! मैं अब स्त्री राग कथा श्रवण का त्याग करता हूँ, स्त्री के मनोहर अंग-उपांग निरीक्षण का त्याग करता हूँ, पूर्व में भोगे गये भोगों का त्याग करता हूँ, मैं गरिष्ठ और इष्ट रस ग्रहण की चाह का त्याग करता हूँ एवं शरीर संस्कार करने का त्याग करता हूँ मैं अज्ञान दशा में लगे दोषों का प्रायश्चित स्वीकार करता हूँ।

हे भगवन् ! मैं ब्रह्मचर्य व्रत को धारण करके परम संयम का पालन करते हुए आत्मब्रह्म को प्राप्त कर सकूँ, यही 'विशद' भावना भाता हूँ।

हे भगवन् ! मेरे द्वारा मन, वचन, काय, कृत, कारित, अनुमोदना से ब्रह्मचर्य व्रत सम्बन्धी जो भी दोष लगे हों, वे दोष मिथ्या हों।

तस्स मिच्छा में दुक्कडं ।

॥ जाप्य — ॐ ह्रीं उत्तम ब्रह्मचर्य धर्मांगाय नमः॥

दशलक्षण चालीसा

दोहा- परमेष्ठी के पद युगल, करते नमन त्रिकाल ।
चौबीसों जिनराज पद, है मेरा नत भाल ।।
चालीसा दश धर्म का, गाते मंगलकार ।
जीवन मंगलमय बने, हो आतम उद्धार ।।

चौपाई

दशलक्षण शुभ धर्म कहाए, जीवों में सौहार्द जगाए ।।1।।
सुर नर गणधर महिमा गावें, जिसको अपने हृदय सजावें ।।2।।
पर्वराज पावन कहलाए, जन-जन के मन को जो भाए ।।3।।
साल में तीन बार जो आए, चैत माघ भादव को पाए ।।4।।
भाद्र मास में आने वाला, दशलक्षण कुछ दिखे निराला ।।5।।
इसमें सब उत्साह जगाते, श्री जिनवर की महिमा गाते ।।6।।
कोई हो एकाशनधारी, कोई होते अनशनकारी ।।7।।
न्हवन करें जिनवर का भाई, पूजा करते हैं अतिशायी ।।8।।
कोई नित्य विधान रचावें, मन्त्र जाप कर पुण्य कमावें ।।9।।
सब आरम्भ छोड़ने वाले, कोई होते भक्त निराले ।।10।।
कोई तीर्थों पर आ जाते, निस्पृह हो जिनवर को ध्याते ।।11।।
राग-द्वेष पापों के त्यागी, संगारम्भ तजे बड़भागी ।।12।।
मुनिवर हैं दशलक्षण धारी, निस्पृह होते हैं अनगारी ।।13।।
यथाशक्ति श्रावक व्रत धारें, वे भी अपने भाग्य संवारे ।। 14।।
क्षमा नीर क्रोधाग्नि बुझावे, मन में समता भाव जगावे ।।15।।
क्षमा भाव जिसके उर आवे, उसका क्रोध शांत हो जावे ।।16।।
मार्दव मान शिला को तोड़े, विनय भाव से नाता जोड़े ।।17।।
मृदू भाव मार्दव से आवे, मान कषाय नहीं रह पावे ।।18।।
माया ठगनी को हे भाई, है कुठार आर्जव सुखदायी।।19।।
मन में 'विशद' सरलता आए, आर्जव धर्म श्रेष्ठ कहलाए ।।20।।

शौच धर्म जिसके आ जाए, लोभ रूप ग्रह ना रह पाए ॥21॥
रहा लोभ का जो परिहारी, होवे शौच धर्म का धारी ॥22
मन-वच-काय एक हो जावे, सत्य धर्म जिसके उर आवे ॥23॥
होवे सत्य महाव्रत धारी, सत्य धर्म पावे अविकारी ॥24 ॥
त्रस स्थावर हिंसा त्यागी, इन्द्रिय मन रोके बड़भागी ॥25॥
मुनिवर उत्तम संयम पावें, अपने सारे कर्म नशावें ॥26॥
तप अग्नी में कर्म जलावें, निज आतम को शुद्ध बनावें ॥27॥
तप से कर्म निर्जरा होवे, कर्म कालिमा को जो खोवे ॥28॥
त्याग धर्म धारी बड़भागी, होते सर्व परिग्रह त्यागी ॥29॥
जिसके त्याग धर्म आ जावे, वह अपने निज गुण प्रगटावे ॥30॥
जिसके राग नहीं रह पावे, वह आकिन्चन धर्म जगावे ॥31॥
आकिञ्चन है धर्म निराला, निज स्वरूप प्रगटाने वाला ॥32॥
बाह्य अभ्यन्तर से अविकारी, होवे परम ब्रह्मचर्य धारी ॥33॥
ब्रह्मचर्य जो धर्म जगाते, निज आतम में वे रम जाते ॥34॥
दशलक्षण यह धर्म बताए, इनको जो प्राणी अपनाए ॥35॥
सुख-शांती सौभाग्य जगाए, रोग-शोक से मुक्ती पाए ॥36॥
परकृत पीड़ा नहीं सताए, भूत-प्रेत की बाधा जाए ॥37॥
बने मोक्षपथ का वह गामी, हो जाए वह पूर्ण अकामी ॥38॥
धन-दौलत आरोग्य प्रदायी, धारण करे धर्म सुखदायी ॥39॥
'विशद' धर्म मेरे उर आवे, जब तक मोक्ष नहीं मिल जावे ॥40॥

दोहा- चालीसा दश धर्म का, पढ़ें-सुनें जो जीव।
वैभवशाली वे बनें, पावें पुण्य अतीव ॥
धर्म हृदय में धारकर, बनो श्री के नाथ।
करो कराओ भाव से, दीप धूप के साथ ॥

जाप्य : ॐ ह्रीं उत्तम क्षमा, मार्दव, आर्जव, सत्य, शौच, संयम, तप, त्याग, आकिंचन्य, ब्रह्मचर्याणि दशलक्षणधर्मायनमः।

दशलक्षण धर्म भावना

शिव पद के सोपान, दश लक्षण शुभ धर्म हैं।
धारें जो गुणवान, वे पावें शिव पद विशद।।

तर्ज – मेरा अंतिम मरण समाधि तेरे दर पर .....

1. उत्तम क्षमा धर्म

दुर्जन प्राणी कभी सताए, उनने कष्ट दिया।
मन से वचन काय के द्वारा, जो प्रतिकार किया।
इच्छित कार्य हुआ ना कोई, हमने क्रोध किया।
कर्मोदय से फल ना पाया, पर को दोष दिया।।
क्षमा भाव गुण रहा जीव का, उसको विसराए।
आतम का स्वभाव क्षमा है, नहीं जगा पाए।।
क्षमा धर्म को धारण करके, निज गुण को पाना।
मोक्षमार्ग की सीढ़ी चढ़कर, शिवपुर को जाना।।1।।

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमा धर्मांगाय नमः दीपं/धूपं/अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा ।

2. उत्तम मार्दव धर्म

पूजा ज्ञान जाति कुल ऋद्धी, तप बल देह कहे।
आठ अंग में मद ये आठों, बन्धन डाल रहे।।
वाणी के वाणों का सहना, बड़ा कठिन गाया।
मद के कारण नहीं जीव को, समकित गुण भाया।।
दर्श ज्ञान चारित्र सुतप शुभ, अरु उपचार कहे।
मार्दव धर्म के हेतु विनय के, भेद ये पंच रहे।।
मार्दव धर्म हृदय में अपने, हमे जगाना है।
मुक्ती का है हेतु विशद जो, हमको पाना है।।2।।

ॐ ह्रीं उत्तम मार्दव धर्मांगाय नमः दीपं/धूपं/अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा ।

3. उत्तम आर्जव धर्म

मन से वचन काय के द्वारा, मायावी प्राणी।
तिर्यंचायू का आश्रव करते, कहती जिनवाणी।।
छल छद्म करते हैं नित प्रति, कर मायाचारी।
ठगते हैं औरों को जिससे, होवें संसारी।।
जो मन में हो कहें वचन से, करें काय द्वारा।
उत्तम आर्जव धर्म कहा यह, जिनवर ने प्यारा।।
सरल हृदय के धारी प्राणी, आर्जव गुण पाएँ।
इस संसार भ्रमण को तजकर, सिद्ध सदन जाएँ।।3।।

ॐ ह्रीं उत्तम आर्जव धर्मांगाय नमः दीपं/धूपं/अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा ।

4. उत्तम शौच धर्म

तृष्णा भाव जगे जीवन में, पाए जो माया।
लोभ पाप का बाप कहा है, आगम में गाया।।
खावे ना खर्चे धन प्राणी, जोड़-जोड़ धरते।
प्राण दाव पे लगा के धन की, रक्षा वे करते।।
मैल हाथ का धन यह गाये, शौच धर्मधारी।
मानें धन को पाकर के जो, होते अविकारी।।
शौच धर्म को पाने वाले, चेतन को ध्याते।
पाकर के चेतन की निधियाँ, सिद्ध दशा पाते।।4।।

ॐ ह्रीं उत्तम शौच धर्मांगाय नमः दीपं/धूपं/अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा ।

5. उत्तम सत्य धर्म

रहा बोलबाला झूठे का, सत्य का मुँह काला।
इस कलिकाल में ठोकर खाए, सत्य धर्मवाला।।

राग-द्वेष से मोहित हैं जो, अज्ञानी प्राणी।
उभय लोक में निन्द्य कही है, दुखकर कटुवाणी।
हित मित प्रिय वाणी है पावन, जग-जन हितकारी।
वचन कहे आगम अनुसारी, सत्य धर्मधारी।।
सत्य महाव्रत सत्य धर्म का, अविनाभावी है।
सत्य धर्म को पाने वाला, शुद्ध स्वभावी हैं।।5।।

ॐ ह्रीं उत्तम सत्य धर्मांगाय नमः दीपं/धूपं/अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा।

6. उत्तम संयम धर्म

पंचेन्द्रिय मन को वश में जो, करते हैं जानो।
भू-जल अग्नी वायु वनस्पति, त्रस कायिक मानो।।
इनकी रक्षा करने वाले, संयम के धारी।
सम्यक् दर्शन ज्ञान चरित धर, होते अनगारी।।
हिंसा झूठ चोरी कुशील अरु, परिग्रह के त्यागी।
पंच समितियाँ पालन करते, शिव के अनुरागी।।
संयम धर्म जगत् में पावन, कहा गया भाई!
जिसके द्वारा पाते प्राणी, जग में प्रभुताई।।6।।

ॐ ह्रीं उत्तम संयम धर्मांगाय नमः दीपं/धूपं/अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा।

7. उत्तम तप धर्म

अनशन तप ऊनोदर धारे, व्रत संख्यान कारी।
रस परित्याग विविक्त शैय्यासन, कायोत्सर्ग धारी।।
प्रायश्चित्त विनय सुतप जानो ये, वैय्यावृत्तकारी।
स्वाध्याय व्युत्सर्ग ध्यान रत, गाये शिवकारी।।
बाह्याभ्यन्तर तप ये द्वादश, आगम में गाए।
कर्म निर्जरा के हेतू यह, अनुपम कहलाए।।

तप से आतम कंचन कुन्दन, निर्मल हो भाई।
तप की महिमा विशद लोक में, जानो अतिशायी।।7।।

ॐ ह्रीं उत्तम तप धर्मांगाय नमः दीपं/धूपं/अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा ।

8. उत्तम त्याग धर्म

दान त्याग में कुछ समानता, शास्त्रों में गाई।
दान त्याग दोनों में फिर भी, भेद है अधिकायी।।
उत्तम पात्र को उत्तम वस्तू, दान में दी जाए।
आहारौषधि शास्त्र अभय ये, चउ विधि कहलाए।।
विषय कषायारम्भ परिग्रह, की ममता खोवें।
त्याग शुभाशुभ वस्तू के जो, परिहारी होवें।।
धन परिजन गृह वस्त्राभूषण, के होकर त्यागी।
मोक्ष मार्ग पर बढ़ने वाले, होते बड़भागी।।8।।

ॐ ह्रीं उत्तम त्याग धर्मांगाय नमः दीपं/धूपं/अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा ।

9. उत्तम आकिन्चन्य धर्म

क्षेत्र वास्तु सोना चाँदी धन, धान्य दास दासी।
कुप्य भाण्ड दश बाह्य परिग्रह, त्यागें वनवासी।।
मिथ्या क्रोध मान माया अरु, लोभ हास्यकारी।
शोक अरति रति ग्लानी भय त्रय, वेद के परिहारी।।
बाह्याभ्यन्तर परिग्रह के यह, चौबिस भेद कहे।
आकिन्चन व्रत धारी इनसे, विरहित पूर्ण रहे।।
कुछ भी किन्चित राग रहा ना, तन मन में भाई।
आकिन्चन शुभ धर्म के धारी, गाये शिवदायी।।9।।

ॐ ह्रीं उत्तम आकिन्चन्य धर्मांगाय नमः दीपं/धूपं/अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा ।

10. उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म

कामदेव के वश में भाई, है यह जग सारा।
उसको वश में किया है जिसने, ब्रह्मचर्य धारा।।
कामी राग रोग से पीड़ित, खोजें नित नारी।
घृणित कार्य में रति करते हैं, होते लाचारी।।
कामदेव चक्री नृप ज्ञानी, ब्रह्मचर्य धारी।
पाते हैं जो सहस रानियाँ, तज हों अनगारी।।
आत्म ब्रह्म में रमन करें जो, निज आतम ध्याते।।
यह संसार असार छोड़कर, सिद्ध दशा पाते।।10।।

ॐ ह्रीं उत्तम ब्रह्मचर्य धार्मं गाय नमः दीपं/धूपं/अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा ।

11. क्षमावाणी पर्व

पर्व क्षमावाणी का मिलकर, सभी मनाते हैं।
मन में हुई कलुषता कोई, उसे मिटाते हैं।।
करते क्षमा सभी जीवों को, वे सब क्षमा करें।
हुए दोष जाने अन्जाने, वे सब पूर्ण हरें।।
मैत्री भाव सभी जीवों से, मेरा नित्य रहे।
बैर नहीं हो किसी जीव से, प्रेम की धार बहे।।
जाने या अन्जाने हमसे, दोष हुए भारी।
'विशद' भाव से क्षमा करो सब, होके अविकारी।।11।।

ॐ ह्रीं उत्तम क्षमावाणी धार्मं गाय नमः दीपं/धूपं/अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा ।

दश धर्म भावना

तर्ज – यह भावना हमारी, प्रभु दर्श तेरे पाँ .....

उत्तम क्षमादि पावन, दश धर्म ये कहाएँ।
धारें हृदय जो अपने, वे जीव मोक्ष पाएँ।
ये भावना, मेरी भावना–2।। टेक।।
है क्रोध दुःखदायी, अति बैर जो बढ़ाएँ।
यह भावना हमारी, उत्तम क्षमा को पाएँ–2॥। ये भावना ... ।।1।।
जो मान करें प्राणी, नीचा दिखाएँ सबको।
मार्दव धरम को पाके, मृदुता हृदय जगाएँ–2॥। ये भावना ... ।।2।।
जो करते मायाचारी, स्व पर के होते घाती।
आर्जव धरम के धारी, ऋजुता हृदय जगाएँ–2॥। ये भावना ...।।3।।
जो लोभ के वशी हो, सुख चैन पर का हरते।
अब शौच धर्म धारें, सबको सुखी बनाएँ–2॥। ये भावना ... ।।4।।
करते असत् कथन जो, कटु बोलते वचन हैं।
हित–मित प्रिय वचन कह, अब सत्य धर्म पाएँ–2॥। ये भावना ... ।।5।।
जीवों के रक्षाकारी, इन्द्रिय विजय करें जो।
संयम के धारी होके, मुक्ती महल को जाएँ–2॥। ये भावना ... ।।6।।
क्षय कर्म करने हेतू, तप करते साधु पावन।
जो कर्म निर्जरा कर, आतम की शुद्धि पाएँ–2।। ये भावना ... ।।7।।
संसार विषय भोगों, को पूर्ण रूप छोड़ें।
हो त्याग धर्म धारी, निज–चेतना को ध्याएँ–2।। ये भावना ...।।8।।
परिग्रह के भेद चौबिस, जो शास्त्र में बताए।
मुनि धर्म आकिन्चन जो, अपने हृदय सजाएँ–2॥। ये भावना ...।।9।।
स्त्री से राग त्यागी, आतम में रमण करते।
ब्रह्मचर्य धर्म धारी, निज ज्ञान विशद पाएँ–2।। ये भावना ... ।।10।।
दश धर्म धारते जो, वे जीव मोक्ष पाते।
वे सिद्ध शुद्ध होकर, शिव सौख्य 'विशद' पांएँ।। ये भावना ... ।।11।।

दश धर्म भावना

दोहा- उत्तम क्षमादि धर्म दश, हैं शिव के सोपान।
भाते हम ये भावना, पाएँ पद निर्वाण।।

चौपाई

उत्तम क्षमा के धारी संत, करने चले कर्म का अंत ।।। ।।
उत्तम मार्दव धर ऋषिराज, तव अर्चा करते हम आज।।2।।
तजने वाले मायाचार उत्तम आर्जव धर अनगार।।3।।
तजने वाले लोभ कषाय, उत्तम शौच धारी ऋषिराय।।4।।
उत्तम संयम पालें आप, तजने वाले सारे पाप।6।।
उत्तम सत्य धर्म को धार, बोलें आगम के अनुसार।।5।।
उत्तम तप धारी ऋषिराज, तव गुण गाए सकल समाज।7।।
पाने वाले उत्तम त्याग, तन से भी त्यागें अनुराग।8।।
उत्तम आकिन्चन को धार, पालें श्रेष्ठ आप आचार।।9।।
सब कुशील के त्यागें कर्म, धारे ब्रह्मचर्य शुभ धर्म।10।।

दोहा - धर्म भावना यह विशद, भावें जो भवि जीव।
मोक्ष प्रदायक भव्य वे, पावें पुण्य अतीव।।

दश धर्मों की स्तुति

(तर्ज – जीवन है पानी की बूँद .....)

दश धर्मों की सीढ़ी हमको, जब मिल जाए रे!।
मुक्ती की मंजिल-हो-होऽऽऽ, क्षण में मिल जाए रे!।।टेक।।

क्रोध क्षमा का नाश करे, बोध ज्ञान को पूर्ण हरे।
जोश में जब प्राणी आए, होश पूर्णतः खो जाए।।
आतम स्वभावी हो-हो-2, क्षमा धर्म जगाए रे!।।
दश धर्मों की ... ।।1।।

अहंभाव में आएगा, मार्दव गुण ना पाएगा।
तुच्छ सभी को जानेगा, उच्च आपको मानेगा।
उसके जीवन में हो-हो-2, ना मार्दव आए रे!।
दश धर्मों की ... ।।2।।

कुटिल भाव मन में आए, मायाचारी कहलाए।
आर्जव उत्तम धर्म रहा, कैसे पाए कहो अहा।।
आर्जव का धारी हो-हो-2, निज ज्ञान जगाए रे!।
दश धर्मों की ... ।।3।।

लोभ पाप का बाप कहा, उसके जो आधीन रहा।
धन में चित्त लगाएगा, धर्म नहीं वह पाएगा।।
उत्तम इस जग में हो-हो-2, वृष शौच कहाए रे!।
दश धर्मों की ... ।।4।।
झूँठ नहीं बोलो प्राणी, कहती है ये जिनवाणी।
सत्य धर्म जो खोएगा, बीज पाप का बोएगा।।
चारों गतियों में हो-हो-2, वह दुख उठाए रे!।
दश धर्मों की ... ।।5।।
छह निकाय के जीव कहे, मन इन्द्रिय छह भेद रहे।
जीवों का रक्षाकारी, इन्द्रिय मन का जयकारी।।
उत्तम सद् संयम हो-हो-2, पाके शिव जाए रे!।
दश धर्मों की ... ।।6।।
कर्मों के क्षय हेतु अरे!, इच्छओं का रोध करे।
बाह्याभ्यन्तर सुतप कहा, उत्तम तप यह विशद रहा।।
उत्तम तप धारी हो-हो-2, शिव पदवी पाए रे!।
दश धर्मों की ... ।।7।।
बाह्य परिग्रह दश जानो, चौदह अभ्यन्तर मानो।
इनका जो परिहारी है, उत्तम त्याग का धारी है।।
त्यागी इस जग को हो-हो-2, तज के शिव जाए रे!।
दश धर्मों की ... ।।8।।
जो किन्चित ना रागी हो, पूर्ण रूप वैरागी हो।
आंकिंचन वह कहलाए, कर्मों से मुक्ती पाए।।
उत्तम आंकिंचन हो-हो-2, जो धर्म जगाए रे!।
दश धर्मों की ... ।।9।।
ब्रह्मचर्य व्रत धारी है, आतम ब्रह्म बिहारी है।
जो आतम को ध्याता है, निज में ही रम जाता है।।
उत्तम ब्रह्मचर्य हो-हो-2, धर शिव सुख पाए रे!।
दश धर्मों की ... ।।10।।
एकाशन उपवास करे, व्रत का धारी क्लेश हरे।
क्षमावाणी फिर करते हैं, क्षमा हृदय में धरते हैं।।
पर्वों को पाके हो-हो-2, पावन हो जाए रे!।
दश धर्मों की ... ।।11।।

दश धर्मों की आरती

(तर्ज- इह विधि मंगल.....)

दश धर्मों की आरति कीजे, परम धरम धर के सुख लीजे ।। टेक ।।
प्रथम आरती क्षमा धरम की, मंगल मय शुभकार परम की ।। 1।।
दूजी आरती मार्दव कारी, मद का दमन किए मनहारी ।।2।।
तीजी आरती आर्जव धारी, माया तजने से हो न्यारी ।।3।।
चौथी आरती शौच धरम की, लोभ त्याग जिन धर्म परम की ।।4।।
पाँचवीं आरती सच की कीजे, सत्य वचन हिरदय धर लीजे ।।5।।
छठी आरती संयम की है, इन्द्रिय दमन किए मुनि की है ।।6।।
सातवीं आरती सुतप की जानो, मोक्ष मार्ग का कारण मानो ।।7।।
आठवीं आरती त्याग की गाई, त्याग धर्म जानो सुखदायी ।।8।।
नौवीं आरती आकिंचन की, राग त्याग आतम चिन्तन की ।।9।।
दशवीं आरती ब्रह्मचर्य की, ब्रह्म स्वरूप 'विशद' जिनवर की ।।10।।
जो यह आरती मुख से गावे, उभय लोक में वह सुख पाये ।।11।।
दश धर्मों की आरति कीजे, परम धरम धर के सुखलीजे।।टेक।।

दश धर्मों की आरती

(तर्ज- दीवाना गुरुवर का....)

आरती को आए-2, दश धर्मों की आज ।
आरती को आए-2 ।।टेक।।
प्रथम आरती क्षमा धर्म की, करते हैं हम भाई-2।
मार्दव धर्म विनय का दाता, है पावन सुखदायी - 2 ।।
आर्जव धर्म सरलता देने-2, वाला है अतिशायी ।।आरती....।।1।।
शौच धर्म है लोभ निवारी, मन निर्मल हो जाए-2 ।
सत्य धर्म को धारण करके, व्रत में वृद्धी पाए - 2 ।।
संयम धर्म धारने वाला-2, महाव्रती कहलाए ।। आरती...।।2।।
सुतप धर्म की महिमा अनुपम, कर्म निर्जरा कारी - 2 ।
त्याग धर्म को पाने वाला, हो जाए अविकारी - 2।।
आकिञ्चन जो धर्म जगाए -2, हो शिव का अधिकारी ।।आरती...।।3।।
ब्रह्मचर्य है धर्म मनोहर, आतम ब्रह्म जगाए -2 ।
दश धर्मों की सीढ़ी चढ़कर, सिद्ध सुपद को पाए - 2 ।।
सिद्ध सदन में रहे हमेशा-2, विशद शुद्ध सुख पाए ।।आरती.... ।।4।।